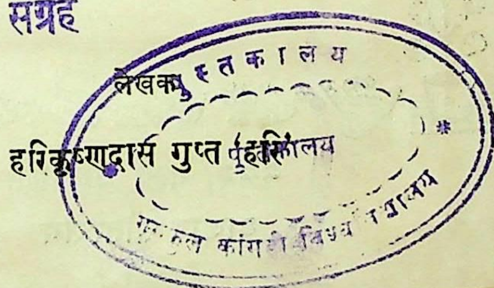
पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

निरीक्षण

[बालोपयोगी हास्य-नाटक]



लेखक

हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि'



प्रकाशक

सुन्दर साहित्य सदन
८८२, गली बेरीवाली
बाजार सीताराम
दिल्ली-६

प्रथमावृत्ति
जुलाई, १९६६

मूल्य
तीन रुपये पचास पैसे



सुन्दर साहित्य सदन
८८२, गली बेरीवाली
बाजार सीताराम
दिल्ली-६

चित्रकार
मोहम्मद इलियास
५७१६, चरखेवालाँ, दिल्ली-६

मुद्रक
वीर कम्पोजिंग एजेन्सी
द्वारा बेंगार्ड प्रेस, दिल्ली-६

दो शब्द

नटखट बन्धुओ !

मेरी लिखी हुई 'पढ़ो और बनो', 'बदला', 'बन लो हीरे', 'जीवन में खेलो', 'बनो लाल अनमोल', 'चलते पुर्जे' तथा 'अपने-अपने मुँह से' शीर्षक पुस्तकें तुम पढ़ चुके हो। मैं अब तुम्हारे लिए नया नहीं रह गया हूँ।

नया नहीं रह गया हूँ, सो तो ठीक है; लेकिन भेंट तुम्हें सदैव नई चीज ही करता हूँ, यह बात तुम्हें माननी होगी। आज भी एक नई चीज तुम्हारी भेंट है। यह है 'निरीक्षण' शीर्षक हास्य-नाटक। इस में विद्यालयों में निरीक्षण कैसे कराया जाता है, इस का चटपटा चित्रण किया गया है। कैसे किया जाना चाहिए?—इस प्रश्न पर भी मीठा प्रकाश डाला गया है।

'निरीक्षण' को पढ़ कर (रंग-मंच पर यह क्या गुल खिलायेगा, इसकी चर्चा न करना ही अच्छा) तुम्हें ऐसा लगेगा जैसे रस के सरोवर में सहज उतर, गड़ाप से डुबकी खा, डुब्बक-ही-डुब्बक होने का रस लिया जा रहा हो हँसायेगा भी यह तुम्हें जी खोल कर, और पेट भर कर भी। हँसते-हँसते लोटन कबूतर न बन जाओ, तो बात नहीं। मारे हँसी के सर्कस के जोकर की सी मुखाकृति के मालिक बन कर तथा वैसी ही चेष्टाएँ करके औरों को भी हँसा सकते हो। इतना कर के तुम कम तीर नहीं मार लोगे। सच, 'बाप न मारी मेंडकी, बेटा तीरंदाज' तुम्हारे बारे में कोई नहीं कह सकेगा क्योंकि हँसना-हँसाना काम के नाते लाम जीतना है और बात के नाते बहुत बड़ी बात। जो समझ से निरे खुक्खल हैं, उन्हें छोड़ कर और सब यही कहेंगे कि जीवन में···और जगत् में भी, हँसना-हँसाना छोड़ और धरा ही कुछ नहीं है।

लेकिन 'निरीक्षण' का कमाल इतना ही नहीं है। इस में और भी चाँद जड़ रहे हैं। इस की गुण-गाथा आगे चलती है। यह तो 'सोने में सुगन्ध' वाली कहावत को चरितार्थ कर रहा है। यहाँ तो 'चुपड़ी और दो-दो' वाला मामला है। आँख मीच कर मानो और आँख खोलकर देखो—यह हास्य-स्वर्ण का वह डला है·····वह दिपदिप करता जगमगाता डला है जो सीख की सुगन्ध से गमगम महक रहा है!······महक रहा है और महका रहा है। और क्या चाहते हो?

बस। स्नेह।

तुम्हारा

हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि'

निरीक्षण

पात्र-परिचय

जुगतराम राजेकीय सहशिक्षा माध्यमिक विद्यालय की पाँचवीं कक्षा के अध्यापक। अवस्था तीस वर्ष। शरीर बलिष्ठ, रंग साँवला। स्वभाव अक्खड़ किन्तु मतलब निकालते समय हद मीठा। मुखाकृति साधारण किन्तु कुछ कठोरता लिये हुए। कर्तव्यपालन में ढीले, जुगत भिड़ाने में चौकस।

मुख्याध्यापक विद्यालय के मुख्याध्यापक। अवस्था पचास वर्ष। डीलडौल साधारण। रंग गेहुँआ। स्वभाव मीठा। आकृति सौम्य; उतनी रौबीली नहीं, जितनी होनी चाहिए।

निरीक्षिका स्कूलों के निरीक्षण के लिए राजकीय शिक्षा विभाग की ओर से नियुक्त एक निरीक्षिका। अवस्था चालीस वर्ष; लगती कम है। कद साधारण, काया सुडौल। रंग चिट्टा। स्वभाव नारी होते हुए भी खूब संयतता लिये हुए। मुखाकृति गम्भीर, अध्ययन एवं चिन्तनशीलता का परिचय देती हुई सी। सहज स्नेहमयी किन्तु कर्तव्य पालन में कठोर। बात कम करती हैं; परन्तु बात की तह तक शीघ्र पहुँचती हैं।

पलटू विद्यालय का चपरासी। एक ग्रामीण तरुण। अवस्था पच्चीस वर्ष। कद साधारण। हाथ-पाँव से खूब हृष्ट-पुष्ट। रंग एक दम काला। स्वभाव जी-हुजूरी का। मुखाकृति से घबराहट टपकती रहती है। बोलते समय कोई-कोई शब्द हकला कर बोलता है।

छात्र पाँचवी कक्षा के छात्र। संख्या छब्बीस। अठारह छात्र, आठ छात्राएँ। अवस्था दस से बारह वर्ष तक। रंग-रूप, डीलडौल तथा वेश-भूषा में सहज विभिन्नता। कमलकुमार, रेवतीशरण, मंगलसिंह, असलम, वीणा तथा मनमोहिनी होश्यार हैं; नानकचन्द, मनोहरलाल, कूड़ेराम अलीहसन, टफर्सन तथा सुरेन्द्रकौर कमजोर; शेष साधारण।

निरीक्षण

[जाड़े का मौसम है। दिल्ली का राजकीय सहशिक्षा माध्यमिक विद्यालय प्रातः दस बजे लगता है। सवा दस बज चुके हैं। विद्यालय में प्रार्थना हो चुकी है तथा छात्र-छात्राएँ और अध्यापक-अध्यापिकाएँ अपनी-अपनी कक्षाओं में आ गये हैं।

पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थी तो अपनी कक्षा में आ गये हैं, परन्तु मास्टर जुगतराम मुख्याध्यापक महोदय से कुछ बात करते रह गये हैं। परिणामतः विद्यार्थियों को एक सीमा तक कक्षा में मनमानी करने की छूट मिल गई है। कुछ इधर-उधर फिर कर गपशप कर रहे हैं। कुछ अपनी-अपनी जगहों पर बैठे, जेबों में से मूँगफली निकाल, छील-छील कर खा रहे हैं। कुछ आपस में धौल-धप्पा करने से भी नहीं चूक रहे हैं। चर्चा सब में साधारणतया आज जो निरीक्षण होना है, उसकी चल रही है।

कक्षा-भवन का कमरा खासा बड़ा और हवादार है। उस में विद्यार्थियों के लिए डेस्क तथा अध्यापक के लिये मेज-कुरसी हैं। तीन पंक्तियों में पाँच-पाँच के हिसाब से कुल पन्दरह डेस्क हैं। उन में से प्रत्येक पर दो-दो बालक बैठ सकते हैं। साधारणतया आगे के डेस्को पर होश्यार छात्र-छात्राओं ने कब्जा किया हुआ है। बीच की श्रेणी के विद्यार्थी बीच के डेस्कों पर बैठते हैं। अध्यापक की दृष्टि से जितना बचे रहें, उतना अच्छा—इस विचार से कमजोरों ने पीछे के डेस्क घेरे हुए हैं। अध्यापक की कुरसी के समीप ही श्यामपट्ट रक्खा हुआ है। मेज पर आगे को ओर बीच में कलमदान शोभायमान है। उस में लाल-नीली स्याही की दवातें, दो कलमें तथा चाक के कुछ टुकड़े बिराज रहे हैं। कलमदान की एक ओर हाजिरी-रजिस्टर, दूसरी ओर श्यामपट्ट को साफ करने के लिए झाड़न तथा पीछे की ओर रूल रक्खा हुआ है। विद्यार्थियों के सामने की दीवार पर भारतवर्ष का एक बड़ा नक्शा तथा महात्मा गांधी का एक भव्य चित्र टंग रहा है जिस से प्रेरणा की किरणें सी फूटी पड़ रही हैं। कक्षा-भवन की झाड़ा-बुहारी तथा उस में रखे हुए सामान को साफ-सुथरी हालत में ठीक ढंग से रखने की ओर आज विशेष ध्यान दिया गया है।

नानकचन्द जो बायीं ओर से प्रथम पंक्ति के अन्तिम डेस्क पर अपने लमढीक साथी मनोहरलाल के साथ बैठा हुआ है तथा जो खूब तगड़ा, शरारती एवं दबंग है, सहसा अपनी

जगह से उठ कर श्यामपट्ट के समीप पहुँचता है और मास्टर जुगतराम की नक़ल करता हुआ कक्षा को सम्बोधन करते हुए कहता है।]

नानकचन्द : (रौबदार आवाज में) अब सब बच्चे शान्त हो जाएँ। (कलमदान में से चाक का एक टुकड़ा उठा कर श्यामपट्ट पर एक गोल आकृति खींचते हुए) यह श्यामपट्ट पर मैं क्या बना रहा हूँ? जो नहीं जानता हो, वह जवाब दे; जो जानता हो, वह नहीं—क्या समझे?

[इस आशा से कि अब कोई नई दिल्लगी होगी, सब बच्चे अपनी-अपनी जगह पर शान्त बैठ कर उत्सुककता से नानक चन्द के मुँह की ओर देखने लगते हैं।]

'यथा नाम तथा गुण' नटखटराय में जो दूसरी पंक्ति के तीसरे डेस्क पर अपनी योग्य संगिनी चुलबुली चुहियारानी के साथ बैठा होता है, नटखटपन जागता है। वह नानकचन्द के प्रश्न का नटखटतापूर्ण उत्तर देता है।]

नटखटराय : (जल्दी से किन्तु बैठे-ही-बैठे) अण्डा।

नानकचन्द : (रौबदार आवाज में कृत्रिम रोष का पुट और देते हुए) खड़े होकर बोलो, अक्लमन्द की दुम !

नटखटराय : (खड़े हो कर) बहुत अच्छा, मास्टर जोकरराम जी। यह है अण्डा ! (मुँह को भी गोल-गोल बनाते हुए) गोल-गोल अण्डा !!

नानकचन्द : (आवाज में से क्रोध का पुट निकाल कर प्रसन्नता का पुट लाते हुए) शाबास ! ऐसे ही होश्यारों से मेरी कक्षा का विद्यालय भर में नाम है। मैं चाहता हूँ, आज की परीक्षा में यहाँ बैठे सब लड़के-लड़कियाँ नम्बरों के नाम पर यही गोल-गोल अण्डा लाएँ और कक्षा के नाम का डंका दिल्ली में ही नहीं, दुनिया भर में (पेट को पीट कर ढोल वाले की नकल करते हुए) ढमढम, ढमाढम कर दें।

[सब बच्चे नानकचन्द की बात पर जी खोल कर ठहाका लगाते हैं। केवल दूसरी पंक्ति के प्रथम डेस्क पर रमारानी के साथ बैठी हुई वीणाकुमारीको उस का यह कहना अच्छा नहीं लगता। रमारानी दुबली-पतली है, वीणाकुमारी मोटी-ताजी।]

वीणाकुमारी : (नानकचन्द का मखौल उड़ाती हुई) बुद्धू मियाँ चाहते हैं—सब गोल-गोल अण्डा लाकर उन जैसे बुद्धू बन जाएँ।

नानकचन्द : (तड़प कर वीणाकुमारी के मोटेपन पर व्यंग्य कसते हुए) क्या कहा, मोटी मुर्गी? मैं बुद्धू हूँ! तू तो बड़ी होशयार है न!!

वीणाकुमारी : (गर्व से) हूँ ही, सब मानते हैं। इस में भी क्या सन्देह है?

कई छात्र-छात्राएँ : (एक-साथ स्वीकृति के स्वर में) यह बात तो सच है।

नानकचन्द : (खिसियाना सा होकर क्रोधपूर्ण

स्वर में जल्दी से) तेरी होश्यारी के नाक-कान न काटे तो मेरा नाम भी बुद्धू मियाँ—

नानकचन्द आवेश में स्वय को स्वयं बुद्धू मियाँ कहते-कहते सहसा सजग हो, जिह्वा होंठों से काट कर चुप रह जाता है। सारी कक्षा उस के इस बुद्धूपन पर खिलखिला कर हँस पड़ती है। खिसियाहट के मारे उस का बुरा हाल हो जाता है।

उसी समय मास्टर जुगतराम कक्षा में प्रवेश करते हैं। उन के प्रवेश करते ही कक्षा में सन्नाटा छा जाता है। नानकचन्द श्यामपट्ट पर से गोल आकृति को मिटाने का भी अवसर न पा, तीर की तेजी से लपक कर अपनी जगह पर एक दम शान्त जा बैठता है। सब छात्र-छात्राएँ खड़े हो, हाथ जोड, सिर झुका कर मास्टर जुगतराम को नमस्कार करते हैं और उन के कुरसी पर बैठ जाने के पश्चात् पुन: अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाते हैं।

मास्टर जुगतराम बढ़िया, गरम कोट-पतलून पहने और टाई लगाये हुए है। जूतों पर आज सुबह ही पूरे दस पैसे खर्च कर के पालिश कराई गई है; फलत: वे खूब चमक रहे हैं। सिर पर मास्टर जी ने—गान्धी-भक्ति के कारण नहीं, जुगत की खातिर गांधी टोपी पहन रक्खी है जो कोट-पतलून और टाई के साथ अपना मेल नहीं बैठा पा रही है।]

जुगतराम : (तेज एवं कठोर स्वर में) **कक्षा में यह इतना शोर क्यों मच रहा था ?**

[कोई बच्चा उत्तर नहीं देता, सब चुप रहते हैं; वरन् साँस तक भी रोक कर और गहरी चुप्पी साध लेते हैं। मास्टर जुगतराम अपने रौब का बायस्कोप देख कर मन-ही-मन गर्व एवं प्रसन्नता से फूल कर गदगद हो उठते हैं। सहसा उन की दृष्टि श्यामपट्ट की ओर जाती है। श्यामपट्ट पर खिंची हुई गोल आकृति को देखकर उन की प्रसन्नता काफ़ूर हो जाती है। उन के गर्व को ठेस लगती है। वे क्षुभित एवं क्रोधित हो उठते हैं।]

जुगतराम : (और भी तेज एवं कठोर स्वर में) **श्यामपट्ट पर यह गोल-गोल किस की करतूत है ?**

[अब भी सब बालक सहमे-सहमे, चुप रहते हैं। एक दूसरे की ओर चोरी-चोरी देख अवश्य लेते हैं, लेकिन बोलता कोई नहीं।]

जुगतराम : (कुछ क्षण प्रतीक्षा कर के फिर उसी स्वर में) **बताओ, बताओ, जल्दी बताओ। यह किस ऊत की करतूत है ? उस ऊत को** (मेज पर मुक्का

मार कर) भूत न बनाया, तो मेराभी नाम मास्टर जुगतराम नहीं ।

[अब भी कोई नहीं बोलता, नानक चन्द से भी तो कक्षा के सब बालक डरते हैं ।]

जुगतराम : (गरज कर) तो तुम नहीं बताओगे ! अच्छी बात है; तो फिर सारी कक्षा को ही भूत बनाना पड़ेगा । (कुछ रुक कर) यों नहीं, जब गोल-मटोल तुम्हारी खबर लेगा, तब तुम मुँह से फूटोगे ।

['गोल-मटोल' मास्टर जुगतराम ने अपने रूल का नाम रख छोड़ा है । उस का नाम सुन कर सब काँप उठते हैं । वीणा कुमारी को नानकचन्द ने मोटी मुर्गी कहा था । वह उससे चिढ़ी हुई है; अतः बदला लेने का अवसर पा, बताने की हिम्मत करती है ।]

वीणाकुमारी : नानकचन्द ने । मास्टर बन कर आप की नकल करते हुए । मैं ने टोका तो (सुबकते हुए) मुझे मोटी मुर्गी कहा ।

जुगतराम : (और भी गरज कर) **क्या कहा— मेरी नकल करते हुए ?**

वीणाकुमारी : (पूर्ववत् सुबकते हुए) जी।

जुगतराम : (गरज को सीमा पर पहुँचा कर नानकचन्द से) **क्यों बे नानक चन्द ! मालूम होता है, तेरी खाल खुजला रही है। तू ने इसे मोटी मुर्गी क्यों कहा ?**

नानकचन्द : (खड़े होकर मास्टर जुगतराम के गरजने की विशेष पर्वाह न करते हुए) **इस ने भी मुझे बुद्धू मियाँ कहा !**

जुगतराम : **बुद्धू तो तू है ही। कहा तो क्या बुरा किया ! और यह गोल-गोल क्यों बनाया श्यामपट्ट पर ?**

[नानकचन्द चुप रहता है। मास्टर जुगतराम के प्रश्न का उत्तर नहीं देता। वीणा ही फिर बोलती है।]

वीणाकुमारी : (सुबकना बन्द कर सहज स्वर में) इस ने बना कर सारी कक्षा से कहा— ऐसा ही गोल-गोल अण्डा लाना है आज ।

जुगतराम : (पहले चौंक कर, फिर गुस्से से आग हो कर) हैं ! यह कहा ! तो यह नालायक आज मेरा भट्टा ही बैठा डालना चाहता था ।

वीणाकुमारी : (अपने कथन की सत्यता पर जोर देते हुए) आप कक्षा में किसी से पूछ लें। मैंने टोका तो (फिर सुबकते हुए) मुझे मोटी मुर्गी कहा ।

जुगतराम : (खीझ एवं रोष से भरे हुए स्वर में नानकचन्द से) यह मुर्गी हो न हो, तुझे बच्चू—आज तो खैर निरीक्षण है,—

[कुछ खयाल आ जाने से बोलते-बोलते सहसा रुक कर मास्टर जुगतराम पहले जल्दी से कुरसी से उठ कर श्यामपट्ट

को झाड़न से साफ करते हैं। फिर पुनः कुरसी पर बैठ कर अपनी बात पूरी करते हैं।]

जुगतराम : (नानक चन्द से उसी स्वर में) हाँ-तो मैं कह रहा था कि आज तो खैर निरीक्षण है, कल मैं तुझे मुर्गा अवश्य बना दूँगा। मुर्गा भी कैसा? प्रदर्शनी में रखने योग्य, बढ़िया, बूदमबेदाल मुर्गा। बारह मसालों वाली चाट का मजा आ जाएगा बच्चू को, जब सुबह से शाम तक कमर के बल, टाँगों में हाथ डाल, कान पकड़े-पकड़े खड़ा रहना पड़ेगा। नालायक कहीं का! सब को अपने जैसा बनाना चाहता है।

नानकचन्द : (बन कर गिड़गिड़ाता हुआ सा) गलती हुई। इस बार माफी मिले, मास्टर जी--

जुगतराम : (नानकचन्द को आगे बोलने न दे कर) बोल मत, मास्टर जी के बच्चे ! चुपचाप अपनी जगह पर बैठा रह । ऐसे, जैसे है ही नहीं ।

[नानकचन्द मुँह तोबड़ा सा बना कर अपनी जगह पर बैठ जाता है । मास्टर जुगतराम कनखियों से उसका मुँह बनाना देखते हैं, परन्तु कहते कुछ नहीं; कुरसी पर बैठे-बैठे कुछ क्षण कुछ सोचते रहते हैं । फिर गर्जन-तर्जन छोड़, अपने सहज स्वर में समूची कक्षा को सम्बोधन करते हुए कहते हैं ।]

जुगतराम : तुम्हें मालूम है, आज क्या होना है । कभी तो आदमी बनना चाहिए। ऐसा भी——

रमारानी : (मास्टर जुगतराम की मुँह-चढ़ी होने के कारण निशंक भाव से उन्हें बात पूरी न करने दे कर) तो क्या मास्टर जी, हम आदमी नहीं हैं, जानवर हैं ?

जुगतराम : (अपने सहज कठोर स्वर की कठोरता में कमी करने की चेष्टा करते

हुए) और क्या नहीं भी ? आदमी होते तो इस तरह हू-हा करते, काँव-काँव मचाते, धौल-धप्पा और धम्मक-धय्या का बाजार गरम करते, शोर-गुल मचा-मचा कर कक्षा को मछली बाजार बनाते ? और फिर आज के दिन ! नहीं जानते तुम—आज क्या है ?

['जानते हैं जी !' 'जानते हैं जी !' कई छात्र-छात्राएँ एक-साथ कहते हैं।]

जुगतराम : (तीसरी पंक्ति के प्रथम डेस्क पर स्टूपीर रेवतीशरण के पास बैठे हुए सहज होश्यार असलमहुसेन से) बोलो जी असलम, आज क्या है ?

असलमहुसेन : (विनम्रतापूर्वक) जी आज मुआइना है।

जुगतराम : (तनिक तिरस्कार के स्वर में) क्या कहा—मुआइना ? इसी लिए मैं ने

तुम से पूछा था । मुस्कराना नहीं, निरीक्षण कहो । अभी भी तुम्हें हिन्दी बोलना नहीं आया···इतने होश्यार होकर भी !

असलमहुसेन : (लजा कर निरीक्षण बोलने की कोशिश करते हुए) जी नरीच्छण ।

जुगतराम : (सिखाने के स्वर में) नरीच्छण नहीं, निरीक्षण ।

[असलमहुसेन बोल न पा कर झेंप जाता है । सब लड़के हँस पड़ते हैं ।]

जुगतराम : (समूची कक्षा को सम्बोधन करते हुए) हाँ-तो आज निरीक्षण है । जानते हो, निरीक्षण में क्या होता है ?

चुहियारानी : (जल्दी से खड़े होकर) परीक्षा होती है···हलकी-फुलकी । खेल-खेल में दी जाने जैसी । तिमाही, छमाही, सालाना जैसी जान लेवा नहीं ।

जुगतराम : (कुछ मुस्करा कर मीठा तिरस्कार

करते हुए) तुम लोग कुछ नहीं जानते। अरे बुद्धुओं,यह परीक्षा तुम विद्यार्थियों की नहीं, हम मास्टरों की होती है। उन परीक्षाओं में हम तुम्हें धक्का देते हैं, इस परीक्षा में तुम हमें पास कराते हो ।

कई छात्र-छात्राएँ : (एक-साथ आश्चर्य से) यह कैसे, मास्टर जी ?

जुगतराम : (समझाने के स्वर में) बात यह है कि निरीक्षक तुम से प्रश्न पूछता है—पढ़ाई-लिखाई से सम्बन्धित और इधर उधर के भी। उन प्रश्नों के तुम ठीक-ठीक उत्तर देते हो, तब तो हमारी लाली रहती है। हम उस की निगाह में चढ़ जाते हैं। अपनी निरीक्षण-विवरण-पुस्तिका में वह हमारी बढ़िया रिपोर्ट लिखता है। हमारी उन्नति के द्वार खुल जाते हैं।

हम भी मास्टरी की अगली कक्षा में चढ़ जाते हैं ।

मनोहरलाल : और जो उत्तर गलत-सलत दिये गये, तो ?

जुगतराम : (कुछ हँसकर मनोहरलाल से) तो क्या ? तुम्हें ही नहीं पता मनोहर लाल ! तब वही होता है, जो ऐसी हालत में हुआ करता है। (भाव-विह्वल स्वर में) अरे, तब हमारी लुटिया डूबने लगती है । हम निरीक्षक की निगाह से उतर जाते हैं । हमारे बारे में वह अपनी निरीक्षण-विवरण-पुस्तिका में अण्ट-सण्ट लिख मारता है । परिणाम यह निकलता है कि हमारी उन्नति रुक जाती है। हम मास्टरी की अगली कक्षा में नहीं चढ़ पाते। कहना चाहिए, फेल हो जाते हैं ।

(समूची कक्षा को सम्बोधन करते हुये स्वर की भाव-विह्वलता को और बढ़ाकर) बोलो बच्चो, तुम मुझे फेल कराओगे कि पास ?

सब छात्र-छात्राएँ : (एक स्वर में) पास !

जुगतराम : (उसी स्वर में) मेरी लुटिया डुबवाओगे कि लाली रक्खोगे ?

सब छात्र-छात्राएँ : (एक स्वर से उत्साहपूर्वक) लाली रक्खेंगे।

जुगतराम : (प्रसन्न होकर) लाली रखनी है तो जैसे-जैसे मैं कहूँ, वैसे-वैसे करो।

सब छात्र-छात्राएँ : (उसी तरह एक-साथ एक स्वर में) आप बताते जाइये, वैसे-वैसे ही करेंगे।

नटखटराय : क्या मजाल जो बाल बराबर भी कसर छोड़ें !

चुहियारानी : बाल क्या, बाल की खाल बराबर भी नहीं, मास्टर जी !

जुगतराम : (घुलमिल कर बात करने के स्वर में मिठास के साथ) बताया तो मैं ने तुम्हें कल भी था। बात यह है कि इस परीक्षा और अन्य परीक्षाओं में अन्तर होता है।

टफर्सन : कैसा अन्टर ?

[सींकिया टफर्सन प्रथम पंक्ति के बीच के डेस्क पर फूले-फैले अलीहसन के साथ बैठा हुआ है। अलीहसन को सिनेमा के गीत गुनगुनाने का शौक है, और टफर्सन को त को ट बोलने की आदत।]

जुगतराम : (कुछ क्रोधित होकर टफर्सन से त को ट बोलने पर उसे टोकते हुए) फिर ट बोले तुम त के स्थान में। स्वयं तो मोटे होते नहीं, खपच्ची बने हो; जिव्हा पर मुटापा चढ़ाये चले जा रहे हो। अन्तर को अन्तर बोलो। अण्टर बोले तो जानते हो, क्या होगा ?

टफर्सन : (सकपकाता हुआ सा) जी-जी, क्या

होगा ?

जुगतराम : (चेतावनी देने के स्वर में) अगटर बोले फिर, तो हण्टर खाने पड़ेंगे।

रमारानी : (आँखें नचा कर कुछ-कुछ मुस्कराती हुई सी) जैसे घोड़े खाते हैं ताँगों में जुत-जुत कर।

जुगतराम : (रमा के कथन का समर्थन करते हुए) हाँ, पढ़ाई भी एक ताँगा है जिस में तुम जुत रहे हो। इस ताँगे में जुत कर तुम फरवट दौड़ोगे तो नाम पाओगे, वाह वाह होगी; फिसड्डी रहोगे तो नक्कू बनोगे, धुत धुत—

[आगे क्या कहें—मास्टर जगतराम सोचते रह जाते हैं।]

असलमहुसेन : (जुगतराम का वाक्य पूरा करते हुए) धुतकारे जाओगे।

जुगतराम : (असलमहुसेन पर शाबासी की निगाह डालते हुए) ठीक कहा। असलम,

तुम वास्तव में होशियार हो। (कक्षा को सम्बोधन करते हुए) तो हाँ, उन परीक्षाओं से इस परीक्षा में अन्तर होता है। छोटा-मोटा अन्तर नहीं, खूब बड़ा···रात दिन का सा अन्तर !

सब छात्र-छात्राएँ : (आश्चर्य प्रकट करते हुए) रात-दिन का सा अन्तर !!

जुगतराम : हाँ, रात-दिन का सा अन्तर। कैसे, सो सुनो। उन परीक्षाओं में तुम्हारा बस्ता तुम्हारे पास नहीं रहता। कोई भूल से भी कोई किताब ले आए और पकड़ में आ जाए तो उस की शामत आ जाती है। स्कूल से भी निकाल दिया जाना सम्भव है—

कई छात्र-छात्राएँ : (मास्टर जुगतराम की हाँ में हाँ मिलाते हुए) यह बात तो सच है।

जुगतराम : (अपना कथन चालू रखते हुए)

इस परीक्षा में तुम्हारा पूरा बस्ता तुम्हारे पास है। तुम उस का अपनी आवश्यकतानुसार उपयोग कर सकते हो, किन्तु समझदारी के साथ। उन परीक्षाओं में तुम्हें तुम्हारे लिए नियत किये गये स्थानों पर ही बैठना पड़ता है। इस परीक्षा में जहाँ बैठ कर तुम उत्तर ठीक दे सको, वहीं तुम्हें बैठाया जायेगा। उन परीक्षाओं में नकल नहीं करने दी जाती, इस परीक्षा में तुम्हें नकल करने की पूरी छूट है।

कई छात्र-छात्राएँ : (अत्यधिक आश्चर्य से) अच्छा!

जुगतराम : हाँ, निरीक्षक को पता न चले—केवल इतना ही ध्यान रखना है। मतलब यह कि परीक्षा में कुछ भी कर सकते हो, लेकिन

किसी भी विद्यार्थी का किसी भी प्रश्न का उत्तर गलत नहीं होना चाहिए। बस, मेरी लाली इसी पर निर्भर है।

[असलमहुसेन के पीछे मनमोहिनी के पास बैठी हुई ग्रेटागार्बो को नपा-तुला बोलना पसन्द है। मास्टर जुगतराम के लेक्चर सा झाड़ने पर वह ऊब उठती है। उन के बोलना समाप्त करते ही वह जल्दी से खड़ी होती है और उन्हें सम्बोधन कर के कहती है।]

ग्रेटागार्बो : अन्तर तो सब समझ लिया, अब करें क्या?

जुगतराम : सुनो, वह भी बताता हूँ। धुर आगे और धुर पीछे की पंक्तियों में कोई कमजोर विद्यार्थी नहीं रहना चाहिए। जो बहुत कमजोर हैं, उनको एक दम बीच में चले जाना चाहिए।

[ग्रेटागार्बो के पीछे वाले डेस्क पर अकेला बैठा हुआ बेचन पाण्डेय दूर की कोड़ी लाने में अपनी उपमा आप है। वह सहसा जल्दी से उठ कर खड़ा होता है और मास्टर जुगतराम को सम्बोधन कर के कहता है।]

बेचन पाण्डेय : (सोच में डूबा हुआ सा) इस तरह तो मास्टर जी, हम बीच वालों की नैया डूब जाएगी। आखिर इस से लाभ क्या होगा?

जुगतराम : (मुस्कराकर) नैया-वैया कुछ न डूबेगी। डूबेगी भी, तो तुम नहीं डूबोगे। लाभ पूछते हो? अरे, आज कल निरीक्षकों की प्रवृत्ति ही यह है कि आगे-पीछे वालों से प्रश्न किये जाएँ, बीच वालों को न छेड़ा जाए। ऐसे संयोग की बात और है। समझ गये? (कुछ रुखाई लिये समझाने के स्वर में) बीच में मत बोला करो, यह अच्छा नहीं।

बेचन पाण्डेय : (अपनी जगह पर बैठते हुए कुछ समझा कुछ न समझा सा) समझा, समझा। समझने के लिए ही बोल पड़ा था। क्षमा कीजिये।

जुगतराम : (अपनी बात आगे चलाते हुए कक्षा को सम्बोधन कर के) और ध्यान देने की बात यह है कि जहाँ तक बने, दो कमजोर एक-साथ भूल कर भी न बैठें। उन के आगे-पीछे भी होश्यार रहें, तो और अच्छा। आगे बैठे होश्यारों में से कुछ को बीच में तथा कुछ को एक दम पीछे पहुँच जाना चाहिए। उन्हें समय पर (अपने शरीर के सभी अंगों की आवश्यक सहायता लेकर अच्छी तरह समझाते हुए) अपनी स्लेट-कापी तिरछी कर के, डेस्क पर लिखकर, पाँव से पाँव दबा कर, धीरे से बोलकर, हाथ के इशारे से, उँगलियाँ बनाकर, आँख से संकेत कर के— और भी ऐसे ही तरीकों से कमजोरों की सहायता करनी चाहिए।

रेवतीशरण : (जल्दी से खड़ा होकर घबराहट भरे स्वर में) **मास्टर जी, यह मेरे बस का नहीं है।**

[प्रथम पंक्ति के प्रथम डेस्क पर बैठे सरदार मंगलसिंह और कमलकुमार आपस में कुछ कानाफूसी करते हैं। फिर जल्दी से खड़े होकर एक-साथ बोलते हैं।]

मंगलसिंह
कमलकुमार : **हमारे भी यह बस का नहीं है।**

मनमोहिनी : (देखादेखी हौलती हुई सी) **मेरे भी यह बस का नहीं है।**

जुगतराम : ('बस का नहीं है' की नई बीमारी के फैलने से कुछ चिन्तित हो, बात बिगड़ती हुई देखकर उसे बनाने के लिए हास का पुट लिये मनाने के स्वर में) **क्या बस-बस की बस छोड़ी है। कक्षा-भवन को ही बस-स्टैण्ड बना डाला तुम ने। जो बस के नहीं होते, कभी-कभी वे काम भी करने पड़ते हैं। अपने मास्टर**

जी के लिए—उन के मुँह की लाली रखने के लिए इतना भी नहीं करोगे तुम ?···(कुछ रुक कर भावपूर्ण स्वर में) करोगे, करोगे, अवश्य करोगे—मुझे पूरा विश्वास है।

[चारों विद्यार्थी और कुछ न कह कर—कहना चाहिए, आधे मन से मास्टर जुगतराम की बात मान कर चुपचाप अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाते हैं।]

जुगतराम : (पुनः पूर्ववत् कक्षा को सम्बोधन करते हुए) कमजोर को आगे वाले होश्यार की आँख मीच कर नकल कर लेनी चाहिए। पीछे कोई होश्यार बैठा हो तो उसे आगे वाले कमजोर को उसके उत्तर पर निगाह मार, उसकी गलती के प्रति उसे सचेत कर देना चाहिए। तनिक आगे को झुक कर सही उत्तर भी धीरे से फुसफुसा देना चाहिए। मतलब यह है कि किसी

भी तरह कोशिश कर के···जुगत भिड़ा कर ऐसा करना चाहिए कि सब के सब सवालों के जवाब एक दम बावन तोले पाव रत्ती हों—

[मास्टर जुगतराम अभी कुछ और कहने जा रहे थे कि सहसा पलटू का दौड़ते हुए प्रवेश। वह गाढ़े का पाजामा, पट्टू का कोट तथा पट्टू की ही टोपी पहने हुए है। उस के हाथ में कुछ कागज हैं। उस की मुखाकृति से लगता है जैसे कहीं और जाते-जाते इधर दौड़ आया है।]

पलटू : (घबराया हुआ सा) म···म··· माट्टर जी, माट्टर जी! वे आ गये। वे-वे···वे इ···इ···इन्सपट्टर साब। न, न, इ-इ···इन्सपट्टरनी साब आई हैं। मैं···मैं···मैं—

जुगतराम : (कुछ घबरा कर पलटू को बात पूरी न करने देते हुए) हैं! क्या कहा? क्या निरीक्षिका जी आई हैं?

पलटू : हाँ-हाँ, वे··· वे··· वे ही आई हैं।

हम ह-ह···है···है···हैटमाट्टर साब से यह कागद मौणी बेन जी को दे··· दे···देने के लिए ले के चलने को ही थे कि वे आ पहूँची भ···भ··· भक-भक धुआँ गाड़ी की तरह। वे···वे हैटमाट्टर से बात करन लगीं, हम दौड़ आये तुम्हारी ओर तुम्हें खबर देने। सु···सु···सु··· सुनाई पड़त है कि-कि··कि बड़ी सख्त है यह इ-इ···इ··इन्सपट्टरनी। स···स···स··सँभल कर रहना, माट्टर जी!

जुगतराम : (भीतर से डर कर, ऊपर से हँस कर) तू ने भली फिक्र की पलटू! घबरा मत। यहाँ भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेले हैं। हमारा नाम जुगतराम यूँ ही नहीं है। बड़े-बड़े निरीक्षक-निरीक्षिकाओं को सीधा रास्ता बता दिया है हमने जुगत भिड़ा-

भिड़ा कर। तू हमें समझता क्या है, पत्थरों को निग मोम और टेढ़े-तिरछों को एक दम सीधा कर के रख दिया है।

पलटू : (घबराहट-मुक्त होकर खीसें निकालता हुआ) हें-हें-हें! त-त· · ·तब तो सब ठीक है। अ-अ· · ·अ· · · अच्छा तो फिर अब हम चलत हैं।

जुगताराम : हाँ, जाओ। लेकिन एक काम करना। जब वे इधर इस कक्षा में आने लगें, तो तू दौड़ कर पहले खबर कर देना।

पलटू : ब-ब· · ·ब· · ·बहुत अच्छा, माट्टर जी।

[पलटू चला जाता है। मास्टर जुगताराम कक्षा को निरीक्षण-साफल्य के लिए उचित रूप देने में लगते हैं।]

जुगताराम : (समूची कक्षा को सम्बोधन कर के कुछ घबराहट भरे स्वर में) अरे बच्चो ! जल्दी करो, जल्दी ! निरीक्षिका जी आ पहुँची हैं।

कई छात्र-छात्राएँ : (एक-साथ) जल्दी करें तो, लेकिन क्या करें जल्दी ?

जुगतराम : (अधिक घबराहट-पूर्ण स्वर में) अरे और क्या, वही जगहों की अदला-बदली । कमलकुमार ! रेवतीशरण ! तुम पीछे जाओ— सब से पीछे। एक इधर, एक उधर। वीणा ! मंगल सिंह ! तुम आगे ही बने रहो। असलम ! तुम बीच में कूड़ेराम के पास। और···और रमा, तुम···तुम—

रमारानी : (मास्टर जुगतराम का आशय समझ, जल्दी से खड़े होकर आँखें नचाती हुई) मैं कहीं नहीं जाऊँगी, मास्टर जी ।

जुगतराम : लेकिन आज निरीक्षण है और तुम जरा—

रमारानी : (मास्टर जुगतराम की बात पूरी

न करने दे कर) आप चिन्ता न कीजिये । मैं ऐसे उत्तर दूँगी कि निरीक्षिका जी फड़क उठेंगी ।

जुगतराम : (कुछ दबे स्वर से) अच्छा, तुम्हारी इच्छा । (वीणाकुमारी से किंचित् मुस्करा कर) वीणा, तुम तनिक इस अपनी अल्हड़ सखी का ध्यान रखना ।

वीणाकुमारी : आप सर्वथा निश्चिंत रहें, मास्टर जी ।

जुगतराम : (पुनः कक्षा के विभिन्न बालक-बालिकाओं को सम्बोधन करते हुए) हाँ, तो मनमोहिनी, तुम उधर सुरेन्द्रकौर के पास जाओ । सत्यव्रत तुम्हारी जगह पहुँच जाए । नानकचन्द और मनोहरलाल पीछे से बीच में आ जाएँ । एक बेचन पाण्डेय के पास, एक टफ़र्सन की बगल में—

नानकचन्द : (जल्दी से खड़ा होकर) मास्टर जी, बैठा कहीं दीजिये, लेकिन हमारी जोड़ी को तोड़िये नहीं। बैटेंगे हम एक-साथ ही ।

जुगतराम : (हिचकिचाते हुए) लेकिन तुम दोनों तो एक दूसरे से बढ़ कर गये-बीते हो ।

नानकचन्द : पर्वाह न कीजिये । आज तो हम कक्षा में होश्यार बन कर रहेंगे ।

नटखटराय : (चुटकी लेते हुए) बन कर ही नहीं, बना कर भी कक्षा को (चौकीदार की तरह आवाज लगाकर) रहो जागते जी· ··हुश्यार !

[नटखटराय के चौकीदार की तरह आवाज लगाने पर सारी कक्षा खिलखिला कर हँस पड़ती है। मास्टर जुगतराम नानकचन्द से इस समय उलझना उचित न समझ कर उसे मनोहरलाल के साथ बेचन पाण्डेय वाले डेस्क पर बैठा कर, बेचन पाण्डेय को मंगलसिंह के पास आगे भेज देते हैं।

इसी प्रकार मास्टर जुगतराम कुछ और छात्र-छात्राओं के स्थानों की भी अदला-बदली कराते हैं। इस अदला-बदली के चक्कर में कुछ मिनटों के लिए कक्षा में बड़ी हड़बड़ी फैलती है। मास्टर जुगतराम के रोकते-रोकते भी थोड़ा गुल-गपाड़ा भी मचता है। फिर स्थानों की अदला-बदली हो चुकने पर कक्षा में एक दम शान्ति छा जाती है।

अदला-बदली के फलस्वरूप अब डेस्कों की प्रथम पंक्ति में सब से आगे बैठे हैं मंगलसिंह और बेचन पाण्डेय, फिर मोहनलाल और देहातीराम, फिर अलीहसन और टफर्सन, फिर लक्ष्मीबाई और छुन्नूमल तथा सब से अन्त के डेस्क पर कमलकुमार अकेला। डेस्कों की दूसरी पंक्ति में सब से आगे वीणाकुमारी और रमारानी, फिर छैलबिहारी और नवाबराय, फिर नटखटराय और चुहियारानी, फिर असलमहुसेन और कूड़ेराम बैठे हैं तथा अन्तिम डेस्क खाली है। तीसरी पंक्ति में सब से आगे बैठे हैं भोलूभाई और श्यामाकुमारी, फिर ग्रेटागार्बो और सत्यव्रत, फिर नानकचन्द और मनोहरलाल, फिर मनमोहिनी और सुरेन्द्रकौर तथा सब से अन्त के डेस्क पर रेवतीशरण अकेला।]

जुगतराम : (शान्त बैठी हुई कक्षा पर निरीक्षक की निगाह डालते हुए) बैठ तो तुम गये ठीक आदमी बन कर। अब जरा यह और देख लिया जाए

कि तुम साफ़-सूफ़ और सँवरे-सँवराये भी ठीक हो कि नहीं।

[मास्टर जुगतराम कक्षा में चक्कर लगाते हैं, छात्र-छात्राओं पर जाँच की निगाह डालते हैं, उन की सफाई एवं सजधज सम्बन्धी त्रुटियाँ पकड़ते हैं और उन्हें दूर करने के लिए उचित आदेश-निदेश देते हैं।]

जुगतराम : (वीणाकुमारी से) वीणा, तुम्हारे बालों का क्लिप निकला पड़ रहा है। उसे ठीक करो।

[वीणाकुमारी क्लिप ठीक से लगाती है।]

जुगतराम : (आगे बढ़ कर छैलबिहारी से) कहो भई ऊल-जलूल ! आज भी ऊल-जलूल ही बने हुए हो। बाल टोपी से बाहर क्यों निकले पड़ रहे हैं ? इन्हें भीतर करो। छैल बिहारी नाम को भी लजाया तुमने !

[छैलबिहारी मास्टर जुगतराम के उल-जलूल कहने पर कुछ चिढ़ता-कुढ़ता सा बाल टोपी के भीतर करता है।]

जुगतराम : (देहातीराम की चोटी को टोपी से बाहर निकली हुई पा कर उसकी गुद्दी पर एक चपत जमाते हुए) देहाती राम, तेरा नाम ही देहातीराम नहीं, तू है ही पूरा देहाती । बोल, करता है चुटिया भीतर कि उखाड़ लूँ ?

[देहातीराम जल्दी से चुटिया टोपी के भीतर करता है और गुद्दी को सहलाता रह जाता है ।]

जुगतराम : (नवाबराय से उसके जूतों पर निगाह डालते हुए) क्यों बे नवाब ! ऐसा नवाब बना कि जूते भी साफ नहीं किये गये । कर जल्दी से साफ ।

नवाबराय : (घबरा कर बगले झाँकते हुए) किस से करूँ ?

जुगतराम : और किस से करेगा ? रूमाल से कर ।

नवाबराय : (चक्कर में पड़ता हुआ) फिर मुँह किस चीज से साफ़ करूँगा ?

जुगतराम : (गरज कर) पहले जूते साफ़ कर, नालायक़! मुँह की फ़िक्र पीछे करना।

[नवाबराय कुछ हिचकिचाता हुआ आधे मन से मुह पोंछने के रूमाल से जूतों पर जमी हुई गर्द झाड़ने लगता है।]

जुगतराम : (और भी गरज कर) इस तरह नहीं, गधे ! अच्छी तरह कर। ऐसे कि तेरा मुँह उनमें चमकने लगे।

[नवाबराय अत्यन्त बेमन से जूतों को रूमाल से पोंछता है।]

जुगतराम : (सब छात्र-छात्राओं से एक-साथ) और सब भी जिन के जूते साफ न हों, इसी तरह से करें। जूतों को आईना बना छोड़ें, जिस से उनमें मुँह देखा जा सके—समझे ?

असलमहुसेन : (अवसर पा, छुपवाँ चोट करते हुए) मास्टर जी, 'आईना' की हिन्दी क्या है ?

जुगतराम : (असलम के व्यंग्य को समझ, उसके पास आ, उसे घूरते हुए) तुझे 'आईना' की हिन्दी बताऊँ ? तेरी होश्यारी की कभी-कभी प्रशंसा कर देता हूँ, इस से—मालूम होता है, तेरे दिमाग चढ़ गये हैं। गालों पर लाल स्याही का कारखाना खुलवाना चाहता है शायद ?

असलमहुसेन : (डर कर गालों पर हाथ रखता हुआ) न-न, मास्टर जी, मेरा यह मन्शा न था। गुस्ताखी हुई। माफ फ़रमाएँ।

जुगतराम : (शेर की तरह दहाड़ कर) अब माफ़ी माँगता है, बे अदब ! मेरी तेरी बराबरी ? अबे, मैं तो जो बोलूं, सब हिन्दी है। जी में तो ऐसा आता है कि अभी तेरा भुरता बना डालूं। लेकिन (बेबसी सी प्रकट

करते हुए) आज निरीक्षण है ।

[मास्टर जुगतराम आगे बढ़ जाते हैं। असलम धीरे से 'बहुत बचे!' कहता हुआ गालों पर से हाथ हटाता है। उस के चेहरे पर मुस्कान सी दौड़ी हुई होती है क्योंकि उस ने मास्टर जी से बदला चुका लिया होता है।]

जुगतराम : (पुनः लौट कर··सम्भवतः 'बहुत बचे' सुन कर, असलम को कुछ क्षण घूरते रहने के पश्चात कूड़ेराम से) क्यों कूड़ेराम, कूड़ा-कर्कट ही भरा है न तेरे दिमाग में? मूँगफली खाई, लेकिन मुँह साफ नहीं किया। मुँह साफ कर झटपट!

[कूड़ेराम रूमाल से मुँह साफ करता है।]

जुगतराम : (डेस्क के नीचे देख कर) और यह डेस्क के नीचे छिलकों का ढेर कैसा लगा रक्खा है? ऐसा ही सफाई का उदाहरण उपस्थित करेगा निरीक्षिका जी के सम्मुख?

[मास्टर जी इधर-उधर के और डेस्कों के नीचे झाँकते हैं। कई जगह और भी छिलकों के ढेर लगे नजर आते हैं।]

जुगतराम : (कूड़ेराम की ओर देखते हुए अजीब ढंग से मुँह बनाते हुए) शाबाश! तू अकेला ही नहीं है सफाई का लाजवाब नमूना पेश करने में; संगी-साथियों की सेना की सेना साथ लिए हुए है।

[जिन बालकों के डस्कों के नीचे मूँगफली के छिलकों के ढेर लगे होते हैं, उन में से अधिकांश मास्टर जुगतराम की मुख-मुद्रा देख कर सकपका जाते हैं। उन में से कई एक-साथ बोल उठते हैं।]

कई बालक : (एक-साथ घबराहट भरे स्वर में) तो क्या करें मास्टर जी अब! आप कहें तो समेट कर बाहर गैलरी में फेंक दें।

जुगतराम : (और भी मुँह बिगाड़ कर) धन्य है! बड़े समझ के धनी हो। अरे,

इस तरह तो तुम्हारी सफाई का नमूना निरीक्षिका जी को कमरे में घुसने से पहले ही दीख जायेगा ।

कमलकुमार : (कुछ सोचकर) खिड़की के रास्ते सड़क पर फेंक दें, तो कैसा रहेगा ?

जुगतराम : (कुछ क्षण माथे पर बल डाले हुए रह कर) यह भी निरापद उपाय नहीं है । इस में भी खटके की खुटखुट हो रही है। निरीक्षिका जी लौटते हुए सड़क पर जब हमारी कक्षा की खिड़की के आगे छिलके छितरे हुए देखेंगी, तो सब समझ जायेंगी। उन की आँखें—भले ही चश्मा चढ़ा हुआ है, बड़ी तेज हैं और उनकी आँखों से भी तेज है उन की समझ। क्या समझे ?

मोहनलाल : (अनुनय-विनय के स्वर में) तो क्या करें, मास्टर जी ! आप ही

बताइये। गलती तो हम से हो ही गई; लेकिन डूबती नाव तो पार लगानी ही होगी।

जुगतराम : (कुछ सोच कर) करोगे क्या, अक्लमन्दो ! समेट-समेट कर अपने-अपने बस्तों में भर लो।

कई बालक : (एक-साथ आश्चर्य से) बस्तों में !

जुगतराम : (तनिक तेज स्वर में) हाँ, जल्दी करो, सोच-विचार का समय नहीं है। वे आती ही होंगी।

[जिन बालकों के डेस्कों के नीचे छिलको के ढेर लागे थे, वे जल्दी-जल्दी उन्हें समेट कर अपने-अपने बस्ते में भरने लगते हैं। सत्यव्रत छिलके समेट कर अपने बस्ते में नहीं भरता। मास्टर जुगतराम जल्दी से उस के पास पहुँचते हैं।]

जुगतराम : (कुछ क्रोधपूर्ण स्वर में) क्यों, तू क्यों नहीं भरता बस्ते में ?

सत्यव्रत : (खड़े होकर दृढ़ स्वर में) मैं यह ढेर अपने बस्ते में नहीं भरूँगा।

मैं ने मूँगफली नहीं खाई है। मैं तो पीछे से आया हूँ।

जुगतराम : (और भी क्रोधपूर्ण स्वर में) बड़ा नहीं खाने वाला आया! अब तो तुझे ही समेटने-भरने हों गे। चल, जल्दी कर।

सत्यव्रत : (दुखी होता हुआ) लेकिन मास्टर जी, यह···यह तो—

जुगतराम : (बात काट कर) यह-यह छोड़। माना, तूने मूँगफली नहीं खाई; लेकिन इसी लिए क्या मार खाने को जी चाह रहा है?

[सत्यव्रत अत्यधिक दुःख मानते हुए छिलके समेट कर अपने बस्ते में भरता है।]

जुगतराम : (चुहियारानी के नाखूनों पर निगाह डाल कर) यह नाखून कितने बढ़ा रक्खे हैं! कटवाये नहीं गये?

चुहियारानी : (किंचित् भयभीत होती हुई) भूल

गई, मास्टर जी ! अब क्या करूँ ?

जुगतराम : (तनिक मुस्करा कर) तू तो चुहिया है। काट डाल अपने दाँतों से। जरा सफ़ाई के साथ। जल्दी कर, निरीक्षिका जी आने को ही हैं।

[चुहियारानी नाखून दाँतों से काटने लगती है। मास्टर जुगतराम का ध्यान नानकचन्द की ओर जाता है। नानकचन्द की उँगलियों में स्याही लगी होती है और वह अपनी कापी पर चीत-मकौड़ा कर रहा होता है।]

जुगतराम : (आँखों में आग भर कर अत्यधिक व्यंगपूर्ण स्वर में) क्या कहने कलाकार शिरोमणि के ! शाबास, पट्ठे ! अपनी योग्यता का यही नमूना दिखाना निरीक्षिका जी को। यह उँगलियों में लगी स्याही को तो पोंछ, कलाकारिता के भूत !

नानकचन्द : (भीतर से परवाह न करते हुए वाह्य रूप में बनावटी

सकपकाहट के साथ) काहे से पूछूं ? डेस्क से कि बस्ते से ?

जुगतराम : डेस्क से या बस्ते से क्यों, मास्टर जी की मूँछ से पोंछ डाल, नालायक ! क्यों, रूमाल कहाँ गया ?

नानकचन्द : लाना भूल गया, मास्टर जी। (कुछ रुक कर) और भूला न भी होता, तो फिर मुँह किस से पूछता ?

जुगतराम : (बता न पा कर संतुलन खोते हुए घबराहट-पूर्ण स्वर में) अरे तो फिर मैं क्या बताऊँ ? जल्दी कर, कहीं से पोंछ। निरीक्षिका जी अब किसी भी क्षण आ सकती हैं। फिर क्या उन के आ जाने पर पोंछेगा ?

[मास्टर जुगतराम जरा आगे बढ़ते हैं। नानकचन्द को शरारत सूझती है। जैसे जल्दी के मारे उसे कुछ सूझ न रहा हो, इस भाव से स्याही मनोहरलाल की नाक से पोंछ देता है।]

मनोहरलाल : (भड़क कर रुआँसा सा होते हुए) मास्टर जी ! मास्टर जी ! इस ने सयाही मेरे मुँह से पोंछ दी।

जुगतराम : (पीछे पलट कर लौटते हुए) तुझे हो क्या रहा है आज, नानकचन्द ?

नानकचन्द : (अत्यन्त मासूम बनते हुए) आप ने ही तो कहा था—कहीं से पोंछ, जल्दी—

जुगतराम : (अत्यधिक गरम हो कर नानकचन्द को बात पूरी न करने देते हुए) मैंने कहा था, तो ले !

[अपनी बात पूरी करते-न-करते मास्टर जुगतराम नानकचन्द के गाल पर एक जोर का तमाचा जड़ देते हैं। पाँचों उँगलियाँ उपड़ आती हैं। नानकचन्द रो पड़ता है—कुछ लगने, से कुछ बन कर। मास्टर जी उस की कुछ और पूजा करें, इस से पूर्व ही सहसा पलटू हाँफते हुए प्रवेश करता है।]

पलटू : (जल्दी से) म···म···माट्टर जी, माट्टर जी ! इन्स्पट्टरनी इधर ही आ रही है। है···है···हैटमास्ट्टर के

साथ-साथ। चल पड़ी हैं उ-उ··· उ···उन के कमरे से।

जुगतराम : (पलटू की ओर आते हुए घबराहट-पूर्ण स्वर में) हैं ! ऐसा ! क्या आरम्भ यहीं से कर दिया ? (घबराहट को दबाकर सहज स्वर में) कोई बात नहीं; तू बाहर जा, बाहर। लेकिन चले न जाना, बाहर ही ठहरना।

[पलटू बाहर चला जाता है। मास्टर जुगतराम नानकचन्द की खबर लेना भूल, घबराये-घबराये से किन्तु अपने को सँभालने की चेष्टा करते हुए अपनी कुरसी पर जाकर बैठते हैं और छात्र-छात्राओं से मुँह से जीभ तनिक बाहर निकाल, तथा हाथ से इशारा करके शान्त, सुव्यवस्थित एवं तत्पर होकर बैठने को कहते हैं।]

जुगतराम : (सब छात्र-छात्राओं के शान्त एवं सुव्यवस्थित ढंग से बैठ जाने पर धीरे से) जैसा कि मैं ने तुम्हें कल बताया था, निरीक्षक तुम से कोई

प्रश्न पूछें तो सब हाथ उठा लेना। जिसे न आता हो, वह भी उठा ले ताकि उन्हें यह न मालूम पड़े कि किसी को नहीं आता। किसी को नहीं आता हो और संयोगवश वे उसी को बताने को कह बैठें, तो उस के अनाप-शनाप कुछ बताने से पहले ही उस के बराबर वाले को खड़े होकर एक दम बता देना चाहिए। उसे भी न आता हो, तो आगे-पीछे बैठे किसी को फटाक से बता देना चाहिए। (दरवाजे की ओर निगाह करके कान लगा कर और कोई आहट न पा कर) और हाँ,—

[मास्टर जुगतराम बोलते-बोलते सहसा चुप हो जाते हैं। उन के मुख पर बेहद घबराहट फैल जाती है।]

जुगतराम : (स्वगत, मरी हुई सी आवाज में)

मर गया मैं तो आज ! हाजिरी तो ली ही नहीं, क्या समझेंगी मुझे निरीक्षिका जी !

कई छात्र-छात्राएँ : (आश्चर्य प्रकट करते हुए सहानुभूति-पूर्ण स्वर में) हाँ, हाजिरी तो आज बोली ही नहीं गई ! अब क्या होगा ?

जुगतराम : (छात्र-छात्राओं के कथन पर ध्यान न देकर आप-ही-आप) ली तो जा सकती नहीं अब; समय ही नहीं है। फिर क्या करूँ ? (कुछ सोच कर सहसा बेचन पाण्डेय से) पाण्डेय ! गिन तो डाल जल्दी से—

बेचन पाण्डेय : (सोते से चौंक कर चैतन्य होते हुए, अपने स्वभावानुसार मास्टर जुगतराम के अपनी बात पूरी करने से पहले ही ज़ल्दी से)

अभी लीजिए--एक-दो-तीन-चार पाँच-छह-सात-आठ—

जुगतराम : (झल्ला कर बेचन पाण्डेय को रोकते हुए क्रोधपूर्ण स्वर में) गल्ले में बैठा कर। यहाँ क्यों जगह घेर रक्खी है ? डाक गाड़ी छोड़ने से पहले सुन तो लिया होता कि कह क्या रहा हूँ मैं। समझ ही नहीं है भेजे में। कई बहुमूल्य क्षण नष्ट कर दिये नालायक ने ! कक्षा की उपस्थिति बता गिनती कर के जल्दी से।

बेचन पाण्डेय : (विनम्रता पूर्वक क्षमा-याचना करते हुए) समझा, समझा; अभी लीजिए (उँगली की सहायता से ऊँचे स्वर में बोल-बोल कर स्वयं से गिनती आरम्भ करते हुए) एक-दो-तीन-चार—

जुगतराम : (खीज भरे स्वर में) मन-ही-मन, बृहस्पति के भाई ! और देख, भूल न हो (कक्षा से) हाँ-तो, जल्दी से बोलो तो—आज कौन-कौन नहीं आये हैं ?

मंगलसिंह : भगेड़ू नहीं आया है।

जुगतराम : उस का नाम क्या लेते हो ? वह कभी आता भी है ? और ?

सुरेन्द्रकौर : जोगा भी नहीं आया है।

मनमोहिनी : और भोगा भी।

जुगतराम : ठीक। ये दोनों बीमारी की छुट्टी पर हैं। और कोई ?

देहातीराम : और··और छज्—

[मोहनलाल छज्जू का मित्र है । अपने अनुपस्थित मित्र की उपस्थिति लगवाने का सुअवसर पा, वह पैर से पैर दाब, देहातीराम को बोलने से रोक देता है और उसे मास्टर जी की निगाह न पड़े, इस तरह हाथ पकड़ कर बैठाते हुए स्वयं खड़ा हो कर बोलने लगता है।]

मोहनलाल : (मास्टर जुगतराम से) और तो सब हैं (सुनाई न पड़े, इतने धीरे से) सम्भवतः ।

बेचन पाण्डेय : (अन्त में अपने को पुनः गिन कर गिनती पूरी करते हुए) सत्ताईस की उपस्थिति है आज ।

जुगतराम : (कुछ प्रसन्न हो कर) ठीक है, हिसाब मिल गया। अब उपस्थिति वैसे ही लगा डालता हूँ।

[मास्टर जुगतराम रजिस्टर खोल कर जल्दी-जल्दी उपस्थिति लगाते हैं । उन्हें डपका लगा रहता है कि कहीं निरीक्षिका जी न आ जाएँ । उपस्थिति लगा, रजिस्टर बन्द कर वे सन्तोष का साँस लेते हैं । द्वार पर अभी भी कोई आहट न पा कर वे अपनी अधबीच में छोड़ी हुई बात को पूरी करने की चेष्टा करते हैं ।]

जुगतराम : हाँ-तो मैं कह रहा था कि आज निरीक्षक की जगह निरीक्षिका जी आ रही हैं । इस लिये महोदय न कह कर उन्हें महोदया कहना और

जैसा कि पहले बता चुका हूँ, उन के आते ही समूची कक्षा को शान्त भाव से खड़े हो कर उन्हें हाथ जोड़कर, सिर झुका कर अत्यन्त-विनय एवं शिष्टतापूर्वक अभिवादन करना है, जब तक वे कहें नहीं, बैठना नहीं है और--

[सहसा दरवाजे पर पाँवों की आहट होती है । मास्टर जुगतराम बोलते-बोलते एक दम चुप हो जाते हैं । कुछ क्षण पीछे मुख्याध्यापक के साथ निरीक्षिका जी का प्रवेश । मुख्याध्यापक खादी का चूड़ीदार पाजामा, बन्द गले का कोट तथा सिर पर खद्दर की राजस्थानी छींट की पगड़ी पहने हुए हैं । उन के पैरों में अहिंसक चप्पल और उन के चलने के ढंग से शिष्टता एवं संयतता टपकी पड़ रही है ।

निरीक्षिका जी खादी की सफेद मोटी साड़ी-ब्लाउज तथा पैरों में अहिंसक चमड़े की सफेद ही चप्पल पहने हुए हैं । साड़ी का किनारा भी सफेद ही है । ब्लाउज में जेब लगी है जिस में एक छोटी सी नोट-बुक तथा सफेद रंग का एक फौन्टेनपेन शोभायमान है । उन की कलाई पर घड़ी बंधी हुई है तथा हाथ में सफेद रंग के ऑयल-क्लॉथ का एक बैग है । उन्हों ने ऐनक लगा रक्खी है जो उन के मुख पर बिराज रही

भव्यता एवं तेजस्विता को और भी बढ़ा रही है।

मुख्याध्यापक तथा निरीक्षिका जी के कक्षा-भवन में प्रवेश करने पर मास्टर जुगतराम अपनी कुरसी पर से उठ खड़े होते हैं तथा निरीक्षिका जी को अत्यन्त विनय पूर्वक नमस्कार करते हैं। छात्र-छात्राएँ भी खड़े हो कर उन के बताये हुए ढंग से निरीक्षिका जी को अभिवादन करते हैं और फिर उन से आशीर्वाद एवं बैठने का संकेत पा कर अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाते हैं।]

मुख्याध्यापक : (निरीक्षिका जी से मास्टर जुगतराम का परिचय कराते हुए गम्भीरता पूर्वक) **आप हैं मास्टर जुगतराम, हमारे विद्यालय की पाँचवी कक्षा के अध्यापक।**

[मास्टर जुगतराम पुनः अभिवादन करते हैं; प्रत्युत्तर में निरीक्षिका जी भी नमस्कार करती हैं।]

मुख्याध्यापक : (मास्टर जुगतराम से और भी अधिक गम्भीरता पूर्वक) **आप शिक्षा विभाग से हमारे विद्यालय के निरीक्षणार्थ पधारी हैं। आपको अपनी कक्षा का निरीक्षण करा दें।**

और भी जो पूछताछ आप करें, उस का समुचित एवं सन्तोषजनक उत्तर दें।

जुगतराम : (अत्यधिक विनय प्रदर्शन करने के कारण खीसें निपोरते हुए से) जी।

मुख्याध्यापक : (निरीक्षिका जी से गम्भीरता का आधिक्य दूर कर विनयपूर्वक किंचित् मुस्कराते हुए) अच्छा तो मुझे आज्ञा दें। मैं अब चलता हूँ। आप देख ही रही हैं मेरी व्यस्तता।

निरीक्षिका : (मुस्करा कर आभार प्रकट करते हुए) प्रसन्नता से। आपको बहुत कष्ट हुआ मेरे कारण।

मुख्याध्यापक : (गद्गद् होकर) यह क्या कह रही हैं आप। कष्ट और आप के कारण। आप से कष्ट मिलेगा तो फिर सुख हमें किस से मिलेगा। (गम्भीर भाव से दार्शनिक मुद्रा में) सुख··

वास्तविक सुख तो कर्त्तव्य-पालन में है और आप का शुभागमन हमारे कर्त्तव्य-पालन को माँजता है, धोता है, निखारता है; उसे अपूर्व चमक-दमक से भरता है। (मास्टर जुगतराम से) मास्टर जी, निरीक्षणोपरान्त आप निरीक्षिका जी को मेरे पास पहुँचा जाएँ अथवा (निरीक्षिका जी की ओर देखते हुए) जैसी आप आज्ञा करें।

[मास्टर जुगतराम मुँह से 'जी' कहते हुए विनम्रतापूर्वक स्वीकृति-सूचक गर्दन हिलाते हैं। मुख्याध्यापक निरीक्षिका जी को नमस्कार कर कमरे से बाहर चले जाते हैं।]

निरीक्षिका : (मुख्याध्यापक के चले जाने के बाद मास्टर जुगतराम से) अच्छा तो अब कार्य आरम्भ किया जाए।

जुगतराम : (अत्यधिक विनयपूर्वक) जैसी इच्छा एवं आज्ञा हो महोदया की। पहले पढाई देखेंगी कि सफाई?

निरीक्षिका : सब से पहले कक्षा का एक चक्कर लगाया जाय। साथ-साथ जैसे-जैसे जो भी होता चले। (मास्टर जुगतराम के चेहरे पर दृष्टि गड़ाकर जैसे उनके भीतर तक सब कुछ देख लेने की चेष्टा करती हुई सी) मेरा क्रम कुछ सब से अलग ही रहता है। देखा जाय तो उसे 'क्रम' नाम देना भी कठिन है।

[निरीक्षिका जी की बात सुन कर एक क्षण को मास्टर जुगतराम जी के मुख पर किंचित् चिन्ता का आभास होता है; लेकि। तुरन्त ही सजग हो, वे उसे प्रयत्न-प्रयास पूर्वक दूर कर देते हैं।

जुगतराम : (बनावटी सहज भाव से) कोई बात नहीं। बहुत अच्छा। तो फिर आइये।

निरीक्षिका : (कुछ सोचते हुए) मेरे आने से

		पहले क्या शिक्षा-क्रम चल रहा था ?
जुगतराम	:	(एक क्षण को इस प्रश्न से चकरा, फिर तुरन्त ही प्रत्युत्पन्न मति से काम लेते हुए) वही चरित्र-शिक्षा चल रही थी जो आज का सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय है।
निरीक्षिका	:	बालकों को क्या बता रहे थे आप इस सम्बन्ध में ?
जुगतराम	:	यही सच-झूठ के बारे में बता रहा था।
निरीक्षिका	:	(कोमलता-पूर्वक कुछ क्षमायाचना सी करते हुए) विषय तो आपने अत्यन्त पुनीत एवं उपयोगी लिया था। मुझे दुःख है, मेरे कारण आप उसे पूरा न कर सके। मैं इस सत्कार्य में बाधा बन गई।
जुगतराम	:	(अत्यन्त विनम्रता से) आप यह क्या

कह रही हैं ? ऐसी कोई बात नहीं । मैं तो उसे समाप्त ही करने वाला था ।

निरीक्षिका : तो पहले आप उसे समाप्त कर लें। फिर और कार्य किया जायेगा। क्यों, ठीक रहेगा न ?

[कोमल शब्दों में विनम्रतापूर्वक दिये गये निरीक्षिका जी के इस अप्रत्याशित आदेश को पा कर मास्टर जुगतराम एक दम हतप्रभ हो उठते हैं । उन का दिल धड़कने लगता है । लेकिन वह अपने को तुरन्त सँभालते हैं ।]

जुगतराम : (किंचित् मुस्कराते हुए) जैसी आपकी आज्ञा । मैं अभी समाप्त करता हूँ ! इतने आप कुरसी पर बिराजें ।

निरीक्षिका : न, न, मैं यूँहीं ठीक हूँ, धन्यवाद ! आप अपना काम करें ।

जुगतराम : अच्छा तो फिर मैं अपने पाठ के अन्त का आरम्भ करता हूँ ।

(बच्चों को सम्बोधन करते हुए अपने पढ़ाने के ढंग में अधिकाधिक निखार ला कर) हाँ-तो बच्चो ! मैं ने तुम्हें सच-झूठ के बारे में सब कुछ बता दिया है। अब मुझे अधिक कुछ नहीं कहना है। कहने की आवश्यकता भी नहीं है। तुम समझदार हो। समझदारों को इशारा काफी होता है। फिर भी इतना और कह कर समाप्त करता हूँ कि सच मलाई है और झूठ पानी। सच का जीवन जीना ऐसा है कि जैसे बढ़िया, मलाई पड़ा हुआ दूध पी लिया। ऐसे ही झूठ का जीवन जीना ऐसा है जैसे पानी मिला हुआ पतला दूध पीना पड़ गया। मलाई वाले बढ़िया दूध को छोड़ कर पानी मिला हुआ, पतला दूध पीना कौन पसन्द करेगा ? बोलो,

कोई करेगा तुम में से ?

सब छात्र-छात्राएँ : (एक स्वर से) कोई नहीं।

जुगतराम : (प्रसन्न मुद्रा में) तो बस आज से ही सोते-जागते सदा सच बोलो··· सचमुच सच बोलो; झूठ कदापि न बोलो—सोते-जागते की तो बात क्या, सपने में भी नहीं ! झूठों भी नहीं !!

[इतना कह कर मास्टर जुगतराम निरीक्षिका जी की ओर इस भाव से देखते हैं जैसे कह रहे हों—मैं अपनी चरित्र-शिक्षा का कार्य-क्रम समाप्त कर चुका हूँ और देखिये--समाप्ति कैसी सुन्दर की है !]

निरीक्षिका : वाह, मास्टर जी ! आप के पढ़ाने का ढंग तो खूब है। उपमा-उदाहरण गजब के अजब ढंग से देते हैं आप !

[निरीक्षिका जी के कहने से ठीक-ठीक प्रकट नहीं होता कि वह मास्टर जुगतराम की प्रशंसा कर रही हैं या उन पर व्यंग्य का छींटा कस रही हैं। मास्टर जुगतराम एक क्षण को चक्कर में पड़ जाते हैं। फिर अपनी प्रशंसा समझ कर मखाने की तरह खिल उठते हैं।]

जुगतराम : (मखाने की तरह खिले-खिले अत्यधिक विनय प्रदर्शन करते हुए) अजी मैं तो निरा नाचीज हूँ। मुझ टटपूँजिये के पास तो एक ही पूँजी है। वह है मेरा कर्त्तव्य-पालन के प्रति प्रेम। बस, इसी से कुछ सूझ-बूझ जाता है, टूटे-फूटे शब्द मुख से निकल पड़ते हैं और वही काम कर जाते हैं।

निरीक्षिका : (भास न पड़ती सी मुस्कान चेहरे पर लाते हुए) यह आपकी विनय-विनम्रता है। अच्छा तो अब कक्षा का चक्कर लगाएँ।

[मास्टर जुगतराम के साथ-साथ निरीक्षिका जी एक ओर से कक्षा का चक्कर लगाती हैं। साथ-साथ किसी के नाखून देखती जाती हैं, किसी के दाँत, किसी के बाल—ऐसे ही और भी चीजें। देखने के साथ-साथ कुछ पूछताछ भी करती जाती हैं।]

निरीक्षिका : (छैलबिहारी के सिर के बालों को जो पुनः टोपी से बाहर निकल आये थे, छू कर) बालों में इतना तेल क्यों डालते हो ?

छैलबिहारी : (कुछ डर कर घबराते हुए) मास्टर जी कहते हैं, इस लिए।

नवाबराय : (बात को सँभालते हुए) इस वास्ते कि बाल सुन्दर और चमकीले लगें।

निरीक्षिका : और कोई लाभ ?

[अब नवाबराय भी बगलें झाँकता हुआ चुप रह जाता है। निरीक्षिका जी आगे बढ़ कर अलीहसन के पास पहुँचती हैं।]

निरीक्षिका : (अलीहसन से) तुम्हारा मुँह तो खूब साफ है।

अलीहसन : (खुश होकर) महोदय—

जुगतराम : (जल्दी से अलीहसन को बात पूरी न करने देकर) महोदय नहीं, महोदया कहो। (अत्यन्त धीरे से होंठों-ही-होंठों में) बेवकूफ !

[निरीक्षिका जी के होंठों पर हल्की हँसी आ जाती है, जो शीघ्र ही उन की गम्भीरता में छिप जाती है।]

अलीहसन : (झेंपता हुआ सा) महोदया, मैंने साबुन से धोया था।

निरीक्षिका : (कोट के कालर के नीचे से गर्दन देख कर) लेकिन तुम्हारी गर्दन पर तो बेहद मैल चढ़ रहा है। क्या गर्दन साफ़ नहीं की थी?

[अलीहसन चुप रहता है।]

निरीक्षिका : (पुनः अलीहसन से) क्या तुम रोज नहीं नहाते?

अलीहसन : (लज्जित होता हुआ) जी नहीं। निरीक्छण के सबब से हाथ-मुँह साबुन से रगड़-रगड़ कर साफ कर के आया था···मास्टर जी की हिदायत के मुताबिक।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) क्या आप इन्हें रोज नहाने को नहीं कहते?

जुगतराम : (सिटपिटा कर) कहता तो हूँ, लेकिन जोर नहीं देता; जाड़ा भी तो आज-कल बेहद पड़ रहा है।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम पर एक जाँच की निगाह डाल कर कुछ मुस्कराते हुए) जाड़े के कारण—क्षमा कीजिए, शायद आप अपने पर भी जोर देते नहीं मालूम देते ?

जुगतराम : (निरीक्षिका जी के मुस्कराने में भूल, उन के आन्तरिक भावों को न ताड़ पा कर आप भी कुछ मुस्कराते, कुछ लजाते हुए से) अब आप जैसा समझें। जाड़ा तो आप देख ही रही हैं कि कैसा पड़ रहा है।

[अलीहसन के पीछे ही बैठी लक्ष्मीबाई बहुत बड़ा स्वेटर पहिने हुए होती है। सहसा निरीक्षिका जी की निगाह उस पर जाती है। वे उसे गौर से देखती हुई कुछ सोचती रह जाती हैं।]

निरीक्षिका : (लक्ष्मीबाई से) तुम यह इतना बड़ा स्वेटर पहन कर क्यों आई हो ? सरदी इस से कैसे जा सकती है ? तुम्हारे शरीर से तो यह दूर-दूर ही रह रहा है।

[लक्ष्मीबाई कोई उत्तर नहीं देती। चुप, पत्थर की मूरत बनी हुई खड़ी रहती है।]

निरीक्षिका : (पुनः किंचित् तेज स्वर में) क्यों, बोलती क्यों नहीं हो ?

लक्ष्मीबाई : (विवश सी होती, मरे से स्वर में) मास्टर जी के कहने से।

[मास्टर जुगतराम लक्ष्मीबाई का उत्तर सुन कर चौंकते हैं और उसे घूर कर देखते हैं।]

निरीक्षिका : (किंचित् विस्मित हो कर) क्या कहा ?—मास्टर जी के कहने से ! है किस का यह ?

लक्ष्मीबाई : (डरती-डरती सी) यह मेरी बहन का है। मेरे पास नया नहीं था।

बहन का नया बुना गया था। मास्टर जी ने कहा था कि नया पहन कर आना, नहीं तो कक्षा में बैठने नहीं दिया जाएगा। लाचार मैं बहन का पहन आई।

निरीक्षिका : (अधिक गम्भीर हो कर) ठीक!

जुगतराम : (कुछ घबरा कर) मेरा मतलब···मेरा आशय यह नहीं था। मैं चाहता था कि कपड़े साफ़—

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर) मैं समझती हूँ। (कूड़ेराम पर निगाह डाल कर तथा उस के मुँह पर मूँगफली का लाल छिलका लगा हुआ पा कर) यह तुम्हारे मुंह पर क्या लग रहा है? क्या मुँह साफ नहीं किया था?

कूड़ेराम : (जल्दी से कोट की बाँह से मुंह पोंछ कर) कहाँ? कुछ भी तो

नहीं ।

निरीक्षिका : झूठ बोलते हो ! अभी क्या पाठ पढ़ा था ? नहीं लग रहा था, तो फिर मुँह क्यों पोंछा ? मुँह खोल कर दाँत दिखाओ ।

[कूड़ेराम हिचकता हुआ दाँत दिखाता है ।]

निरीक्षिका : (कूड़ेराम के दाँतों में मूँगफली के कण लगे हुए देख कर) तुम्हारा तो मुँह भी साफ नहीं है। खाना खाने के बाद क्या कुल्ला नहीं किया था ?

कूड़ेराम : (सफाई दिखाता हुआ) घर से तो कर के आया था ।

निरीक्षिका : तो फिर ?

कूड़ेराम : (हिचकिचाते हुए) यहाँ नहीं कर पाया ।

निरीक्षिका : यहाँ क्या खाया था ?

कूड़ेराम : (उसी स्वर में) यहाँ कक्षा में बैठ कर मूँगफली खाई थी ।

निरीक्षिका : मूँगफली कक्षा में बैठकर क्यों खाई ?

कूड़ेराम : (सफाई पेश करते हुए) बहुतों ने खाई; मास्टर जी ने भी खाई ।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से कुछ बिगड़ कर) क्या आप ने इन्हें चाहे जहाँ, चाहें जब, चाहे जो-कुछ खाने की छूट दे रक्खी है ? आदमी न बना कर बकरी ही बनाना चाहते हैं आप इन्हें ?

जुगतराम : (सिटपिटाकर सिर खुजाते हुए) न, न, यह बात नहीं है । आप भी क्या खयाल कर रही हैं । बात असल में यह है कि आज सरदी बहुत है । बस इस लिए इन के चोरी-चोरी थोड़ी-बहुत मूँगफली खाने की

मैं ने उपेक्षा कर दी। मामूली डाँट-डपट कर के ही रह गया। (कुछ रुक कर) इन के निहोरे खाने पर, बहुत जोर देने पर दो चार दाने मैं भी खा बैठा। सींग कटा कर बछड़ों में--

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर गूढ़ स्वर में) बस-बस, कोई बात नहीं। मैं सब बात समझती हूँ।

निरीक्षिका : (पुनः लक्ष्मीबाई से उसके मुँह को गौर से देख कर) मालूम होता है कि तुम ने भी मूँगफली खाई है।

लक्ष्मीबाई : (जल्दी से अपनी बाँह से मुँह पोंछते हुए) जी, जी…

[लक्ष्मीबाई कुछ कह न पा कर 'जी, जी' कर के ही चुप रह जाती है।]

निरीक्षिका : (पुनः लक्ष्मीवाई से) यह तुम

अपनी बाँह से अपना मुँह क्यों पोंछ रही हो ? उस बालक ने भी ऐसा ही किया था । क्या तुम लोगों के पास रूमाल नहीं हैं ?

लक्ष्मीबाई : हैं तो, लेकिन मुँह पोंछने के काम के नहीं हैं।

निरीक्षिका : क्यों ?

लक्ष्मीबाई : उन से जूते पोंछे थे।

निरीक्षिका : (अत्यधिक आश्चर्य से) जूते पोंछे थे ! क्यों ?

लक्ष्मीबाई : मास्टर जी ने कहा था—जूते साफ होने जरूरी हैं; मुँह की फिक्र फिर करना।

निरीक्षिका : (एक बार मास्टर जी की ओर देख कर पुनः लक्ष्मीबाई से) अच्छा, ठीक।

जुगतराम : (सकपकाते हुए) मैं···मेरा मतलब-

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर) छोड़िये, छोड़िये इस बात को; आगे बढ़ें।

[निरीक्षिका जी सहसा चुहियारानी की ओर मुड़ आती हैं। वे उस के नाखून देखती हैं और उन्हें टेढ़े-मेढ़े कटे हुए पा कर आश्चर्य-चकित होती हैं।]

निरीक्षिका : (चुहियारानी से) यह तुम्हारे नाखून कैसे कटे हुए हैं ?

[चुहियारानी चुप रहती है।]

निरीक्षिका : चुप क्यों हो ? ठीक-ठीक बताओ।

चुहियारानी : (धीरे से) मैं ने आप काटे हैं।

निरीक्षिका : किस चीज से ?

चुहियारानी : दाँतों से।

निरीक्षिका : (और भी अधिक विस्मित हो कर) हैं ! दाँतों से !! क्यों ?

चुहियारानी : (रोनी सी आवाज में) मास्टर जी ने कहा था।

निरीक्षिका : (विस्मय की सीमा पार करते हुए कुछ क्रोधित भी हो कर) क्या कहा ?—मास्टर जी ने कहा था ! पूरी बात बताओ।

चुहियारानी : मेरे नाखून बढ़े हुए थे। घर से कटवा कर आना भूल गई थी। मास्टर जी ने कहा—दाँतों से ही काट डाल; आज निरीक्षण है, जल्दी कर। मास्टर जी ने कहा और मैंने जैसे बने, काट डाले।

[चुहियारानी कहते-कहते रो पड़ती है—कुछ सचमुच तो कुछ झूठ-मूठ।]

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से क्रोधपूर्ण स्वर में) मास्टर जी, यह क्या बात है ?

जुगतराम : (चुहियारानी की ओर आग्नेय नेत्रों से देख कर निरीक्षिका जी से बात बनाते हुए) बात कुछ नहीं

है । यह नाखून कटवाने की चोर है । आज भी कटवा कर नहीं आई । मैंने कहा-सुना, तो इसने दाँतों से काट धरे । इसे आदत है नाखून दाँतों से चबाने की, काटने की । इस का नाम चुहियारानी भी शायद इसी लिए रक्खा गया है । (चुहियारानी से) खबरदार ! अब ऐसा कभी नहीं करना ।

निरीक्षिका : (रहस्य पूर्ण स्वर में) हूँ ! समझी ।

[निरीक्षिका जी और मास्टर जुगतराम आगे बढ़ते हैं ।]

निरीक्षिका : (आगे बढ़ कर छुन्नूमल से) तुम्हें मिठाई दी जाए और तुम्हारी बहन पास ही खड़ी हो तो तुम मिठाई स्वयं खाओगे कि उसे दोगे ?

छुन्नूमल : (तुरन्त जवाब देते हुए) खाऊँगा ! मिठाई खाने के लिए होती है, न कि देने के लिये ।

[उत्तर सुन कर सब हँस पड़ते हैं ।]

निरीक्षिका : (आगे बढ़ कर कमलकुमार से) तुम्हारा क्या विचार है ?

कमलकुमार : (सोचते हुए) माँगेगी, तो उसे भी दे दूँगा ।

निरीक्षिका : (रेवतीशरण के पास पहुँच कर) और तुम्हारा क्या विचार है ?

रेवतीशरण : (बढ़िया जवाब देने के विचार से काफी देर सोच कर) केवल माँगने पर तो नहीं दूँगा; रोने लगी तो एक-आध डली दे कर चुप करना ही पड़ेगा ।

निरीक्षिका : (आगे बढ़ कर मनमोहिनी से) तुम्हें मिठाई दी जाए और तुम्हारा छोटा भाई पास खड़ा हो तो तुम उस अवस्था में क्या करोगी ?

मनमोहिनी : कुछ आप खाऊँगी, कुछ उसे खिलाऊँगी ।

निरीक्षिका : और जो वह सारी माँगने लगे, तो ?

मनमोहिनी : (मुँह बना कर) तो उसे एक थप मार कर भगा दूँगी ।

निरीक्षिका : और जो वह रोने लगे ?

मनमोहिनी : (सोच कर विवशतापूर्ण स्वर में) तब तो सारी उसे खिलानी पड़ेगी ।

निरीक्षिका : प्रसन्न मन से खिलाओगी कि वैसे ही ?

[मनमोहिनी चुप रहती है ।]

निरीक्षिका : (बराबर में बैठी हुई सुरेन्द्रकौर से) और तुम क्या करोगी ?

सुरेन्द्रकौर : (स्वर में होश्यारी टपकाते हुए) मैं तो हौवा-हप कर के, उसे बहका कर आप हप कर जाऊँगी और उस के लिए आप से और माँग लूँगी ।

[यह उत्तर सुन कर कक्षा में पुनः हँसी की लहर दौड़ जाती है ।]

निरीक्षिका : (सुरेन्द्रकौर पर टटोलवाँ दृष्टि डालते हुए) और जो मुझ से और लोगी, उस का क्या करोगी ? उसे खिलाओगी या आप ही हप कर जाओगी ?

[इस बार सुरेन्द्रकौर चुप रहती है। निरीक्षिका जी अब अपनी जेब में से नोट-बुक निकाल कर उस में कुछ बातें नोट करती हैं और फिर आगे बढ़ कर नानकचन्द और मनोहरलाल के पास पहुँचती हैं। नानकचन्द अब तक चुप हो चुका होता है; लेकिन रोने के कारण उस की आँखें लाल हुई होती हैं।]

निरीक्षिका : (नानकचन्द की आँखें देख कर) तुम्हारी आँखें लाल क्यों हो रही हैं ?

[नानकचन्द चुप रहता है।]

निरीक्षिका : (प्यार-भरे स्वर में) बताते क्यों नहीं ? बोलो, क्या बात है ?

[नानकचन्द फिर भी चुप रहता है; लेकिन इस बार उस की बगल में बैठा मनोहरलाल उत्तर देता है।]

मनोहरलाल : जब कोई रोवेगा, तो आँखें लाल न होंगी तो और कैसी होंगी ?

निरीक्षिका : (मनोहरलाल से) रोया क्यों यह ?

मनोहरलाल : मार जो पड़ी।

निरीक्षिका : (तनिक आश्चर्य से) मार पड़ी ! क्यों ? किस ने मारा ?

मनोहरलाल : मास्टर जी ने मारा। इस ने मेरी नाक पर स्याही जो लगा दी।

निरीक्षिका : नाक पर स्याही लगा दी ! क्यों ? (मनोहरलाल के कोट की बाँह देख कर) और यह तुम्हारे कोट की बाँह पर स्याही क्यों लग रही है ?

मनोहरलाल : नाक की स्याही पोंछी थी इस से।

निरीक्षिका : (अत्यधिक आश्चर्य-चकित होकर) नाक की स्याही पोंछी कोट की बाँह से ! खूब !! क्यों ? रूमाल न था ?

मनोहरलाल : रूमाल से जूते पोंछने पड़े थे।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से उन की ओर कठोर दृष्टि से देखते हुए) यह जूते रूमाल से खूब पोंछवाये आप ने! धन्य है!

[मास्टर जुगतराम कोई जवाब नहीं देते, कटे-कटे से चुप रह जाते हैं। निरीक्षिका पुनः अपनी नोट-बुक में कुछ नोट करती हैं। मास्टर जी काँप उठते हैं।]

निरीक्षिका : (पुनः मनोहरलाल से) पूरी बात बताओ—कैसे क्या हुआ?

मनोहरलाल : इस ने कापी पर चीत-मकौड़ा करते-करते अँगुलियाँ स्याही से भर लीं। मास्टर जी ने इस से अँगुलियाँ साफ़ करने को कहा। इस ने उन्हें मेरी नाक से पोंछ दिया। मास्टर जी ने इस बात पर इस के तमाचा जड़ दिया और यह लगा लड़कियों की तरह रोने—

निरीक्षिका : (उँगली से मनोहरलाल को चुप होने का संकेत कर नानकचन्द से) तुम ने अपनी स्याही लगी उंगलियाँ इस की नाक से से क्यों पोंछी ?

नानकचन्द : मैं ने मास्टर जी से पूछा था कि काहे से पोंछूँ क्योंकि रूमाल मेरे पास था नहीं। मास्टर जी ने कहा—कहीं से पोंछ, पोंछ जल्दी से। बस मैं ने उन्हें इस की नाक से पोंछ दिया।

निरीक्षिका : नाक से क्यों पोंछा ?

नानकचन्द : (विज्ञता का प्रर्शदन करते हुए) आखिर कहीं से तो पोंछता। डेस्क से पोंछता तो डेस्क दूर से ही गन्दा दीखता। बस्ते से पोंछता तो बस्ता पास से गन्दा नजर आता।

निरीक्षिका : और इस की नाक गन्दी नजर नहीं आ रही ?

नानकचन्द : नाक तो यह आसानी से धो आ सकता था। इसे मुँह धोने तो जाना ही था। देख नहीं रहीं आप इस के मुँह पर लगी दाल को ?

निरीक्षिका : (मनोहरलाल के मुँह को ध्यान से देख कर) हाँ, दाल तो लग रही है इस के मुँह पर। तो इसी लिए लगाई अपनी उँगलियों की स्याही तुम ने इस के मुँह पर ?

नानकचन्द : (पुनः रुआँसा सा होकर) मास्टर जी ने पूछताछ तो कुछ की नही और झट मार दिया।

निरीक्षिका : (मनोहरलाल से) तुम मुँह धो कर भी नहीं आये घर से !

मनोहरलाल : (लज्जित होकर) देर हो जाने के डर से वैसे ही भाग आया।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) मारने के सम्बन्ध में आपने सम्भवतः

शिक्षा-विभाग का ताजा परिपत्र नहीं पढ़ा ?

जुगतराम : (रुक-रुक कर) जी···पढ़ा तो है । ···उस में यथासम्भव बालकों को शारीरिक दण्ड बिल्कुल न देने के लिये कहा गया है; परन्तु···परन्तु काम भी तो चलाना पड़ता है । ···यथासम्भव की भी तो सीमा है ।

निरीक्षिका : (सत्यव्रत से) तुम्हें भी मास्टर जी मारते हैं ?

[सत्यव्रत चुप रहता है ।]

निरीक्षिका : (नवाबराय से) और तुम्हें ?

[नवाब भी चुप रहता है ।]

निरीक्षिका : (पीछे की ओर मुड़ कर रेवती शरण से) तुम बोलो ।

[रेवतीशरण भी चुप रहता है ।]

निरीक्षिका : (मनमोहिनी से) तुम क्या कहती हो ?

[मनमोहिनी भी चुप रहती है। इस बीच निरीक्षिका जी का मुँह दूसरी ओर पाकर मास्टर जुगतराम बालक-बालिकाओं की ओर घूर कर आग बरसाते हुए नेत्रों से देखते हैं और 'नहीं मारते' कहने के लिए संकेत करते हैं।]

निरीक्षिका : (कमलकुमार से) तुम बोलो ।

कमलकुमार : (मास्टर जुगतराम की ओर देख कर) नहीं मारते।

निरीक्षिका : (देहातीराम से) और तुम्हें ?

देहातीराम : (मास्टर जुगतराम की ओर देख कर) नहीं मारते।

निरीक्षिका : (अलीहसन से) तुम बताओ, तुम्हें मास्टर जी पीटते हैं कि नहीं ?

अलीहसन : (कुछ सोचते हुए) मास्टर जी नहीं, अपनी भूल, अपना याद न करना पिटाई कराता है।

रमारानी : (स्वयं खड़ी होकर गर्व भरे स्वर में) महोदया, मैं बताऊँ। इन में से कोई ठीक नहीं बतायेगा। असल बात यह है कि मुझे, सुरेन्द्रकौर और छुन्नू को छोड़ कर कक्षा में और सब पिटते हैं। होश्यार-से-होश्यार भी कभी-न-कभी।

निरीक्षिका : (आश्चर्य से) और तुम लोग क्यों नहीं पिटते ? तुम में ऐसी क्या बात है ?

रमारानी : (आँखे नचा कर और भी गर्व-पूर्ण स्वर में) हम ट्यूशन जो पढ़ते हैं मास्टर जी से।

निरीक्षिका : (अत्यधिक आश्चर्य से) ट्यूशन पढ़ते हो, इसी लिए नहीं पिटते ! तो मास्टर जी तुम्हें ट्यूशन पढाते हैं। (मास्टर जुगतराम से) यह क्या बात है ?

जुगतराम : (घबराते-सकपकाते, फिर भी अपने

को सँभालते हुए) बात-वात कुछ नहीं है। यह सब मेरे पड़ोस में रहते हैं। इसी लिये इन्हें बताना पड़ जाता है। ट्यूशन-च्यूशन की कोई बात नहीं। रही मारने की बात, सो आप (रमा, छुन्नू आदि की ओर संकेत कर के) इन्हें देख कर ही अन्दाजा लगा लीजिए कि ये सब बदन से कितने दुबले-पतले और कमजोर हैं; सो बस मारते समय इस खयाल से कि कहीं इन के लग न जाए, इन्हें तरह दे जाता हूँ। ...और वैसे मैं मारता ही किसे हूँ। कभी-कभार की बात और है।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम का अपनी सफाई में दिया गया वक्तव्य शान्तिपूर्वक सुनकर) मैं समझी। अच्छा, अब बैठें।

[निरीक्षिका जी और मास्टर जुगतराम लौट कर मेज के पास आते हैं। निरीक्षिका जी मास्टर जुगतराम की कुरसी पर बैठती हैं। पलटू जल्दी से एक और कुरसी लाकर रखता है। उस पर मास्टर जुगतराम बैठते हैं। निरीक्षिका जी अपनी नोट-बुक निकाल कर पुनः कुछ नोट करती हैं।]

निरीक्षिका : (सब छात्र-छात्राओं से) **अब मैं तुम से भूगोल-इतिहास से सम्बन्धित कुछ प्रश्न पूछूँगी। जिन्हें उत्तर आता हो, वे हाथ उठा लिया करें; लेकिन उत्तर वही दे जिस से पूछा जाय।**

[सब सजग एवं तत्पर हो जाते हैं।]

निरीक्षिका : **बताओ, कानपुर क्यों प्रसिद्ध है ?**

[सब छात्र-छात्राएँ हाथ उठा लेते हैं।]

निरीक्षिका : (प्रसन्न हो कर) **सब को आता है, सुन्दर !** (मंगलसिंह की ओर संकेत कर के) **तुम बताओ।**

मंगलसिंह : **वहाँ चमड़े का सामान बढ़िया बनता है।**

निरीक्षिका : ठीक ! सब हाथ नीचा कर लें।

[सब हाथ नीचा कर लेते हैं।]

निरीक्षिका : अब जिन्हें प्रश्न का उत्तर न आता होगा, वे हाथ उठायेंगे। अच्छा, बताओ—चितरंजन क्यों प्रसिद्ध है ?

[सब छात्र-छात्राएँ हाथ उठा देते हैं।]

निरीक्षिका : (मुस्करा कर) समझ लूँ—किसी को नहीं आता ? मैं ने कहा था न कि जिन्हें न आता हो, वे हाथ उठाएँ। अच्छा, अब जिस की ओर मैं संकेत करूँगी, वह उत्तर देगा। हाथ उठाने की आवश्यकता नहीं है।

[लज्जा-भरे हास्य की एक लहर कक्षा में दौड़ जाती है और सब हाथ नीचे कर लेते हैं।]

निरीक्षिका : (वीणाकुमारी से) तुम बताओ !

वीणाकुमारी : वहाँ रेल के इंजन बनते हैं।

निरीक्षिका : (नटखटराय से) बम्बई क्यों प्रसिद्ध

है ?

नटखटराय : लाल छाल के केलों के लिए (कुछ सोचते हुए) और बुढ़िया के सुरमे के लिए भी।

निरीक्षिका : कैसे मालूम हुआ ?

नटखटराय : कैसे क्या, मेरी नानी बम्बई गई थी। केले लाई मेरे लिए, सुरमा अपने लिए। केले खूब खुशबूदार और मीठे थे—खा कर सहज पता चल गया। रहा सुरमा, सो नानी कह रही थीं कि उस से उन्हें फिर से अच्छा सूझने लगा है।

निरीक्षिका : (न-मालूम सा मुस्कराते हुए) ठीक। (नटखटराय को बैठ जाने का संकेत करते हुए टफर्सन से) दिल्ली कहाँ है ?

टफर्सन : (लापरवाही से) उत्तर प्रदेश में।

निरीक्षिका : (मोहनलाल से) तुम बताओ ।

मोहनलाल : (सोचते हुए) पंजाब में।

निरीक्षिका : (ग्रेटागार्बो से) तुम कहाँ बताना चाहती हो ?

ग्रेटागार्बो : दिल्ली में बैठी; जहाँ कहें, बताऊँ ?

निरीक्षिका : (मुस्कराते हुए) तुम्हारा उत्तर बहुत जोरदार है। ···नपा-तुला भी एक नम्बर ! (बैठ जाने का संकेत कर के अलीहसन से) तुम बताओ, दिल्ली क्यों मशहूर है ?

अलीहसन : (दिल-फेंक ढंग से) दिल्ली दिल वालों की बस्ती है। यहाँ के आदमी दिल लेते, देते, फेंकते, चुराते···और भी अटरम-सटरम उस का करते, जरा नहीं घबराते ! दिल्लगीबाज भी वे एक नम्बर के हैं । (लय के साथ कुछ-कुछ गाकर)—

दिल्ली में बसते दिलवाले दीवाने,
दिल लेने-देने में जो खूब सयाने !—

[अलीहसन को आगे बोलने से निरीक्षिका जी रोक देती हैं। माथे पर बल डाल, वे कुछ सोचने लग जाती हैं।]

निरीक्षिका : (अलीहसन से कुछ इस ढंग से जैसे उस की बात में उन्हें खूब रस आया है) दिल्ली की यह खास खूबी तुम्हें कैसे पता चली ?

अलीहसन : (हर्षित होकर उत्साह पूर्वक) अब्बाजान के साथ एक मुशायरे में गया था। वहाँ एक शायर साहब झूम-झूम कर बता रहे थे।

निरीक्षिका : और यह शेर कहाँ से सीखा ?

अलीहसन : (और भी अधिक उत्साह एवं गर्व के साथ) 'दिल वालों की बस्ती' फिल्म का है। साल भर से चल रही है यह फिल्म दिल्ली में।

सात बार देख आया हूँ मैं इसे ।

निरीक्षिका : (अपने पूर्व ढंग पर आ कर अलीहसन को घूर कर देखते हुए) तो तुम्हारे खयाल से दिल्ली इसी से मशहूर है ?

अलीहसन : जी हाँ, दिल्ली की बड़ी बात यही है।

निरीक्षिका : और छोटी बातें ?

अलीहसन : (प्रश्न को हँसी में उड़ाते हुए कुछ धृष्ट भी हो कर) छोटी बातें महोदय—न, न, महोदया, मुझ से न पूछ कर किसी छोटे से पूछें।

निरीक्षिका : (अत्यधिक गम्भीर होकर) ठीक। (मास्टर जुगतराम से धीरे से) यह बालक किस भाषा में किस ढंग से बातें करता है,—देख-सुन रहे हैं न आप ?

जुगतराम : (सिर खुजलाते हुए) सब सुन रहा हूँ, सब समझता हूँ; सब जानता हूँ।

पर सिनेमा का भूत और आजकल की यह डाइन सोसायटी मेरी कुछ चलने भी दे। फिर यह कौम—

निरीक्षिका : (जल्दी से मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर) कौम की बात कृपया बीच में न लाइये; यह ठीक नहीं। (कक्षा को सम्बोधन करते हुए) अच्छा बच्चो, भूगोल सम्बन्धी अन्तिम प्रश्न बताओ। बोलो, झाँसी क्यों प्रसिद्ध है? (मनोहरलाल की ओर उँगली उठा कर) तुम बताओ।

मनोहरलाल : (खड़े हो कर सोचता हुआ) झाँसी··· प्रश्न है—झाँसी क्यों प्रसिद्ध है। ···हाँ, याद आ गया। झाँसी में झाँसा देने वाले बसते हैं, इस लिए प्रसिद्ध है।

लक्ष्मीबाई : (तड़प कर उठती हुई) नहीं, झूठ बात है। वहाँ तो भोले-भाले, भले लोग

बसते हैं ।

निरीक्षिका : (मुस्करा कर) मालूम होता है, तुम झाँसी की रहने वाली हो ।

लक्ष्मीबाई : (खिलती हुई सी) जी हाँ ।

निरीक्षिका : फिर तुम्हीं बताओ—झाँसी क्यों प्रसिद्ध है ?

लक्ष्मीबाई : (जोश एंव गर्व-भरे स्वर में) दुनिया जानती है—झाँसी क्यों प्रसिद्ध है । झाँसी प्रसिद्ध है झाँसी की रानी महारानी लक्ष्मीबाई की वीरता, शूरता एवं देशभक्ति के कारण, उन के अपनी आन, बान और शान पर बलिदान हो जाने के कारण ! सब बोलो—महारानी लक्ष्मीबाई की···

सब छात्र-छात्राएँ : (तुमुल स्वर में) जय !!

निरीक्षिका : (ध्यान से लक्ष्मीबाई की ओर देखती हुई) ठीक कहा तुमने । तुम में तो नेता बनने के गुण हैं । लगता

है, तुम भी महारानी लक्ष्मीबाई बनोगी। क्यों, बनोगी न ?

[लक्ष्मीबाई शर्माती, सकुचाती हुई सी बैठ जाती है ।]

जुगतराम : (अवसर पा कर निरीक्षिका जी को प्रसन्न करने के विचार से) अजी इस का तो नाम भी लक्ष्मीबाई ही है।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम के कथन की ओर ध्यान न देकर कक्षा से) अच्छा, अब भूगोल सम्बन्धी चर्चा समाप्त करने से पहले नक्शे का भी तनिक उपयोग कर लें। (बेचन पाण्डे को ऊँघता हुआ सा पा कर उस से) नक्शे में गंगा कहाँ है--तुम दिखाओ।

बेचन पाण्डेय : (चौंक कर चैतन्य होते हुए) नक्शे में···गंगा ! गंगा वाराणसी में है, हरद्वार में है, नक्शे में यहाँ कहाँ ? होती तो नक्शा कब का गल कर

समाप्त हो गया होता, यहाँ बाढ़ आ गई होती, हम सब डूब गये होते।

[बेचन पाण्डेय का उत्तर सुन कर समूची कक्षा अट्टहास कर उठती है। मास्टर जुगतराम को बेचन पाण्डेय पर बेहद गुस्सा आता है।]

जुगतराम : (गुस्से से लाल-पीले हो कर बेचन पांण्डेय से) **तुम तो अभी भी डूब गये!--**

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम को और कुछ कहने से रोक कर कक्षा से) **अच्छा, अब इतिहास-चर्चा करें। बताओ, राम कौन थे ?** (टफर्सन की ओर संकेत करके) **तुम बताओ।**

टफर्सन : **हिन्दुओं का खुदा।**

असलम : (जल्दी से खड़ा होकर) **खुदा नहीं, बुत।**

निरीक्षिका : (टफर्सन और असलम के उत्तरों से कुछ चिंतित होकर मास्टर जुगतराम से) **यह बालक कैसी**

साम्प्रदायिकता से ओत-प्रोत बोलियाँ बोल रहे हैं—आप देख रहे हैं न ?

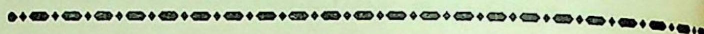
जुगतराम : (स्वयं भी चिंतापूर्ण मुखाकृति बना कर) सब देख रहा हूँ।

निरीक्षिका : तो फिर आप ने इन का दृष्टिकोण बदलने के लिये कुछ किया नहीं ?

जुगतराम : (सफाई सी पेश करते हुए) करता तो रहता ही हूँ, पर आप जानती ही हैं कि कैसे वातावरण में ये पले हैं और रह रहे हैं। धीरे-धीरे ही इन का दृष्टिकोण व्यापक होगा।

निरीक्षिका : (रेवतीशरण से) तुम बताओ—राम कौन थे ?

रेवतीशरण : (जल्दी-जल्दी, जैसे रटा हुआ सुना रहा हो) राम अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र थे। रावण लंका का राजा था। वह बुरे काम करता था। राम की पत्नी सीता को चुरा कर



ले गया था । उन्हों ने उसे मार कर लंका पर विजय प्राप्त की। फिर अयोध्या में लौट कर ऐसी अच्छी तरह राज्य किया कि लोग—

निरीक्षिका : (रेवतीशरण को बीच में ही रोक कर) बस-बस, ठीक, बैठ जाओ तुम। (छुन्नूमल से) तुम बताओ—अकबर कौन था ?

छुन्नूमल : एक विदेशी था।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से कुछ व्यंग्य पूर्वक) यह बालक क्या कह रहा है ?

जुगतराम : (कुछ झुँझलाहट से) कह तो ठीक ही रहा है।

निरीक्षिका : (कुछ सोचते हुए रुक-रुक कर) इस तरह तो···साम्प्रदायिकता—

जुगतराम : (जल्दी से निरीक्षिका जी को बात पूरी न करने दे कर) वह और बात है; लेकिन सच तो सच ही रहेगा। (मंगलसिंह से) तुम बताओ।

मंगलसिंह : वह हिन्दुस्थान का महान सम्राट् था। उस ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिये नया धर्म चलाया।

[निरीक्षिका जी इस बीच में अपनी नोट-बुक निकाल कर कुछ नोट करती हैं।]

निरीक्षिका : (भोलू भाई से) तुम अकबर के नवरत्नों के नाम बताओ।

भोलूभाई : अकबर बादशाह था। उस के पास तो रत्नों का खजाना था। कौन से नौ रत्नों के नाम बताऊँ?

निरीक्षिका : (मुस्करा कर) तुम खजाने वाले रत्नों की बात करते हो, तुम नहीं— कोई और बताए।

[नवाब राय के नाम याद होते हैं, अतः होश्यारों में अपनी गिनती कराने के लिए जल्दी से उठकर फरफर बोलता है।]

नवाबराय : फैजी, अबुलफजल, अब्दुलरहीम खानखाना, टोडरमल, राजा मानसिंह, बीरबल, मुल्ला-दो-पियाजा—

[मुल्ला-दो-पियाजा तक पहुंचते-पहुँचते नवाबराय सहसा चुप हो जाता है।]

निरीक्षिका : क्यों, चुप क्यों हो गये ?

नवाबराय : (लज्जित हो कर) जी, जी क्या बताऊँ।

निरीक्षिका : (मुस्करा कर) यह मुल्ला-दो-पियाजा कैसे आ बैठे तुम्हारे नवरत्नों की पंक्ति में ?

नवाबराय : (लज्जा-पूर्ण सफाई देते हुए) जी, फरफर बोलने की रेलगाड़ी छोड़ने के चक्कर में गलत नाम ले बैठा।

निरीक्षिका : यह रेलगाड़ी छोड़ने के लिये तुम से कहा किस ने था ? क्यों छोड़ी ?

नवाबराय : मास्टर जी ने कहा था--जवाब फरफर दो, रेलगाड़ी सी छोड़ दो; गलत-सही की उतनी चिंता न करो। इस तरह गलत भी सही--

निरीक्षिका : (नवाबराय को आगे बोलने न दे कर मास्टर जुगतराम से व्यंग्यपूर्ण स्वर में) मास्टर जी, देखिये तो--यह कह क्या रहा है ? आप ने

रेलगाड़ी तो खूब छुड़वाई, लेकिन वह पटरी पर से उतर गई।

[निरीक्षिका जी के कहने के ढंग पर रोकते-रोकते भी सब छात्र-छात्राओं को हँसी छूट पड़ती है ।।

जुगतराम : (असमंजस में पड़े हुए से) जी, जी मेरा यह आशय न था।

निरीक्षिका : (मर्म को बेधते-छेदते से स्वर में मास्टर जुगतराम से) मैं समझती हूँ (कक्षा से) अच्छा, अब सब बालक एक प्रश्न विज्ञान का बताएँ।

[सब बालक पुनः तत्पर एवं सावधान हो जाते हैं।]

निरीक्षिका : जिंदगी के लिए सब से जरूरी चीज क्या है?

[सब बालक पहले मना करने को भूल कर स्वभाव-वश हाथ खड़ा कर लेते हैं।]

निरीक्षिका : यह क्या ? हाथ नीचे करो। इस की जरूरत नहीं है। (मुस्करा कर) मैं ने मान लिया है, तुम सब लोग सब बातें जानते हो। बस, जिस से मैं पूछूँ, वह उत्तर दे।

[सब बालक लजा कर हाथ नीचे कर लेते हैं।]

निरीक्षिका : (भोलू भाई से) तुम बताओ।

भोलूभाई : (जाड़े की शिद्दत मस्तिष्क में भरी हुई होने के कारण भोलेपन से) धूप।

निरीक्षिका : श्यामाकुमारी से) तुम ?

श्यामाकुमारी : हवा।

निरीक्षिका : (कुड़ेराम से) तुम बोलो।

कूड़ेराम : (सोचता हुआ) पानी।

निरीक्षिका : (असलम को उत्तर के लिये कुछ व्यग्र सा अनुभव करते हुए) तुम क्या कहना चाहते हो ?

असलम : जाड़े में धूप, गर्मी में हवा और बरसात में पानी।

निरीक्षिका : (फड़क कर) खूब ! कैसे ?

असलम : जाड़े में धूप में बैठने से ही जान आती है। गर्मी में हवा न चले तो मारे उमस के दम घुट कर मर जाएँ। बरसात में पानी न पड़े तो खेतों में अनाज

कैसे पैदा हो ? अनाज पैदा न हो तो फिर खाएँ क्या ? जियें कैसे ?

निरीक्षिका : (प्रसन्नता प्रकट करती हुई) तुम्हारा जवाब तो लाजवाब है।

कमलकुमार : (सहसा खड़े हो कर) महोदया, मेरा उत्तर भी सुन लीजिए ।

निरीक्षिका : तुम भी बोलो—क्या कहना चाहते हो ?

कमलकुमार : बुढ़ापे में धूप, जवानी में हवा और बचपन में पानी।

निरीक्षिका : (कुछ आश्चर्य से) यह कैसे ?

कमलकुमार : सुनिये । बूढ़ों की जर्जर काया में धूप में बैठ कर ही जान आती है । जवान हवा में ही फू-फाँ कर अपने शरीरों में जान बढ़ाते हैं। जीवट के काम कर जिंदगी का सबूत देते हैं । और बच्चे पानी में ही जीवन का रस लेते हैं। पानी पड़ता है । घर आगे गंगा बहने लग जाती है। तब

उस में छप-छप कर के·· कागज की नावें तिरा-तिरा कर।

निरीक्षिका : बहुत ठीक। तुम्हारा उत्तर लाजवाब का भी जवाब बन गया। यह एक ही प्रश्न विज्ञान का मुझे पूछना था। पूछा, तो उत्तर मिले कविता में। अच्छा चलो, अब कविता पर ही आ जाएँ।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) मास्टर जी, किसी एक कविता का नाम बताइए जिसे सब ने याद किया हो।

जुगतराम : (कुछ सोचते हुए) 'ज्योति जगाओ, ज्योति जगाओ' सब के याद है।

निरीक्षिका : (कक्षा से) अच्छा, 'ज्योति जगाओ' कविता की एक पंक्ति एक बालक कहेगा, दूसरी दूसरा, तीसरी तीसरा —इसी तरह वे सब जिन-जिन से मैं पूछूँ। (देहातीराम से) तुम बोलो पहली पंक्ति।

देहातीराम : (गा कर सुनाने की भोंडी चेष्टा करते हुए)—
ज्योति जगाओ, ज्योति जगाओ।

निरीक्षिका : (छुन्नूमल की ओर संकेत कर के) **अगली पंक्ति तुम ।**

छुन्नूमल : (सोचता हुआ, दूसरी पंक्ति याद आ जाए, इस लिए पहली पंक्ति ही दुहराता हुआ)—
ज्योति जगाओ, ज्योति जगाओ ।

निरीक्षिका : **इस से आगे की पंक्ति बोलो।**

कमलकुमार : (तनिक आगे की ओर झुक कर छुन्नूमल को बताने के लिए धीरे से) **जगमग-जगमग ज्योति जगाओ।**

निरीक्षिका : **यह फुसर-फुसर क्या हो रही है ?**

कमलकुमार : (सीधे होकर) **जी कुछ नहीं।**

निरीक्षिका : (छुन्नूमल से) **हाँ-जी, बोलो।**

छुन्नूमल : (कमलकुमार के बताये हुए को

कुछ-का-कुछ समझ कर जल्दी से)-
चकमक पत्थर पर सुलगाओ ।

निरीक्षिका : खूब ! (सुरेन्द्रकौर से) आगे तुम।

सुरेन्द्रकौर : (सोचती हुई अपने मन से बना कर)-
घी लाओ जी, रूई लाओ ।

निरीक्षिका : (चुहियारानी से) आगे तुम।

चुहियारानी : (सुरेन्द्रकौर की पंक्ति पर पंक्ति बैठाती हुई)—
बाती बट कर दीप जलाओ ।

मंगलसिंह : (मास्टर जुगतराम के संकेत पर स्वतः खड़ा हो कर) जी मैं सुनाता हूँ पूरी कविता—
ज्योति जगाओ, ज्योति जगाओ ।
जगमग-जगमग ज्योति जगाओ ।

निरीक्षिका : (मंगलसिंह को आगे न बोलने दे कर) बस-बस, मैं ने सुन ली कविता। (कक्षा से) अब यह बताओ कि मोहन काला है—इस वाक्य में कौन सा शब्द विशेषण है और कौन सा

विशेष्य ?

[सब बालक सोचने लग जाते हैं ।]

निरीक्षिका : (मोहनलाल से) तुम बोलो।

मोहनलाल : (रोता हुआ सा) आप मुझे काला कह कर चिढ़ाती क्यों हैं ?

निरीक्षिका : (कुछ चकित हो कर एवं कुछ सहानुभूति से भर कर) अरे ! क्यों, क्या तुम्हारा नाम मोहन है ?

[मोहनलाल आँखों में आँसू भर लाता है । कुछ-कुछ सुबकता हुआ सा भी लगता है । उत्तर कुछ नहीं देता ।]

निरीक्षिका : (मोहनलाल के दुःख को कम करने के खयाल से) तो प्रश्न कर दिया जाता है कि मोहन गोरा है—इस वाक्य में विशेषण-विशेष्य छाँटे जाएँ ।

मोहनलाल : (पहले जैसे स्वर में) अब आप मेरी मखौल उड़ाती हैं—मुझ काले को गोरा कह कर ।

[इतना कह कर वह और भी अधिक रोने-सुबकने लगता है ।]

निरीक्षिका : (कुछ सहानुभूति से, कुछ पिण्ड

छुड़ाने के विचार से) अच्छा तो तुम बैठ जाओ । और लड़के उत्तर देंगे पहले ही प्रश्न का ।

[मोहनलाल 'जान बची, लाखों पाये ।' मन-ही-मन कहता हुआ बैठ जाता है । फुसर-फुसर कर के बराबर में बैठे देहाती राम से अपनी चालाकी की डींग भी मारता है । निरीक्षिका जी कनखियों से सब देखती हैं ।]

निरीक्षिका : (नवाबराय से) हाँ जी, तुम बोलो ।

नवाबराय : मोहन विशेषण, काला विशेष्य ।

निरीक्षिका : (छैलबिहारी से) तुम बोलो ।

छैलबिहारी : काला विशेषण है, मोहन विशेष्य ।

निरीक्षिका : (वीणाकुमारी से) तुम बोलो ।

वीणाकुमारी : मोहन विशेष्य, काला विशेषण ।

निरीक्षिका : (रमा से) तुम बोलो ।

रमा : (वीणाकुमारी के उत्तर को दुहराने की चेष्टा में उसे उलट-पुलट कर बोलते हुए) काला विशंष्य, मोहन विशेषण ।

निरीक्षिका : (कूड़ेराम से) तुम बोलो ।

कूड़ेराम : (सोचता हुआ) सब तरह सब ठीक है। मोहन और काला रंग दोनों ऐसे घुले-मिले हैं कि किसी को कुछ भी कह लो।

निरीक्षिका : (उत्तर में रस ले कर कूड़ेराम के शब्दों को दुहराते हुए) किसी को कुछ भी कह लो, ऐसे घुले-मुले हैं। कैसे घुले-मिले हैं—उदाहरण दे कर बताओ।

कूड़ेराम : उदाहरण यूँ समझिये बहन जी, (मास्टर जुगतराम आँखें तरेरते हैं, अत सँभल कर) न-न, महोदया, जैसे हाण्डी में नमक डाल कर हिलाने से जामुनें घुल-मिल जाती हैं।

[निरीक्षिका सहित उत्तर सुनकर सब हँस पड़ते हैं। केवल मास्टर जुगतराम ताव-पेच खाते हुए चुप बैठे रहते हैं।]

निरीक्षिका : (मुस्करा कर कूड़ेराम से) तुम्हारे उत्तर ने तो मुँह में पानी भर ला दिया; पर इस मौसम में जामुनें कहाँ।

(पुन गम्भीर हो कर कक्षा से) अच्छा, अब हिन्दी लिखने की परीक्षा होगी । सब बालक अपनी-अपनी कापी निकाल लेंगे। उस पर सुन्दर अक्षरों में तुरताफुरती एक वाक्य लिखेंगे । केवल एक वाक्य । और फिर कलम रख देंगे । कापियाँ मैं स्वयं आ कर देखूँगी। अन्य कापियाँ भी बाहर निकाल कर रख लें। वे भी इसी बीच में देखी जा सकती हैं।

[सब बालक-बालकाएँ कापियाँ निकाल कर बाहर रख लेते हैं । फिर हिन्दी की कापी पर तुरताफुरती एक वाक्य लिख कर कलम रख देते हैं । कुछ बालक कुछ न लिख कर सोचते रह जाते हैं ।]

निरीक्षिका : (सोच में पड़े हुए बालकों को लक्ष्य कर के) सोच में लटके नहीं रहना है। तुरन्त लिख दो।

[शेष बालक भी तुरन्त लिख डालते हैं । निरीक्षिका जी मास्टर जुगतराम सहित कक्षा में चक्कर लगाते हुए शीघ्रता-

पूर्वक सब का वाक्य पढ़ती जाती हैं तथा किसी-किसी की एक-दो-कापी भी देखती जाती हैं। लगभग तीन-चौथाई कक्षा देखने पर वे अपनी नोट-बुक निकाल कर कुछ नोट करती हैं। लौटते हुए जब वे सत्यव्रत का वाक्य पढ़ती हैं, तो उन्हें उस की कापी पर मूँगफली के छिलके पड़े हुए दीखते हैं। उसके डेस्क पर भी कुछ छिलके पड़े हुए होते हैं।]

निरीक्षिका : (सत्यव्रत से) यह मूँगफली के छिलके तुम्हारी कापी पर कैसे आये? डेस्क पर भी पड़े हैं। क्या तुम अब इस समय भी मूँगफली खा रहे थे?

सत्यव्रत : जी नहीं।

निरीक्षिका : तो फिर यह छिलके?

सत्यव्रत : यह पहले के हैं। लेकिन मेरे खाने के नहीं हैं।

निरीक्षिका : (कुछ आश्चर्य से) तो फिर किस के खाने के हैं? तुम्हारी कापी पर कैसे आ गये?

सत्यव्रत : बात यह है कि छुन्नू ने मूँगफलियाँ खा कर ढेर लगाया था। मास्टर जी ने बैठने की जगहों की अदला-बदली

कराई। उसे मेरी जगह भेज दिया और मुझे यहाँ बैठा दिया। फिर उस की खाई हुई मूँगफलियों के ये छिलके मुझे अपने बस्ते में भरने पड़े ताकि कमरा साफ रहे। भरते हूए कुछ कापियों में चले गये। कापियाँ निकालते हुए कुछ डेस्क पर गिर पड़े।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगताम से) छिलके आपने बस्तों में खूब भरवाये! (कुछ सोचते हुए सत्यव्रत से) तुम्हारी जगहों की अदला-बदली क्यों कराई गई?

सत्यव्रत : (किंचित् गर्व से) छुन्नू से मैं होश्यार जो हूँ। (मास्टर जुगतराम को दाँतों से होंठ भींचते हुए पा कर सहमें-सहमे से स्वर मे) मास्टर जी ने जैसे जिसे जहाँ ठीक समझा, बैठाया।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम पर जिज्ञासा

की दृष्टि डाल कर) यह क्या बात है?

जुगतराम : (सिर खुजलाते हुए रुकते-अटकते से स्वर में) मेरा···मेरा मतलब यह था कि···कि शरारती बालक तनिक दूर-दूर रहें, जिससे उनकी कल दबी रहे।

निरीक्षिका : (रहस्यपूर्ण मुस्कान के साथ) बहुत ठीक, मैं समझी।

[निरीक्षिका जी पुनः अपनी नोट बुक-निकाल कर कुछ नोट करती हैं और फिर मास्टर जुगतराम वाली कुरसी पर जा कर बैठ जाती है। मास्टर जुगतराम भी बराबर वाली कुरसी पर जाकर बैठ जाते हैं। उनका चेहरा कुछ फक पड़ता जा रहा है।]

निरीक्षिका : (कक्षा से) अब मैं गणित का एक सवाल जबानी निकालने के लिए दूँगी। सब बालक-बालिकाएँ अपनी-अपनी स्लेटें निकाल लें और एक मिनट के भीतर-भीतर उस का उत्तर लिख कर स्लेटें उलटी कर के रख दें। सवाल बहुत सरल होगा।

[सब बालक-बालिकाएँ स्लेटें निकाल, स्लेटी हाथ में ले,

सवाल सुन कर उस का उत्तर स्लेट पर लिखने के लिए तत्पर हो जाते हैं ।]

निरीक्षिका : **सवाल सुनो। पाँच गज कपड़ा है। एक-एक गज के टुकड़े फाड़ने हैं। कितने टुकड़े फटेंगे? कितनी बार फाड़ना पड़ेगा?**

['अरे! इतना सरल सवाल!' सब बालक मन-ही-मन कहते हैं और उन के चेहरे प्रसन्नता से खिल उठते हैं। वे जल्दी से उत्तर लिखने लग जाते हैं। एक मिनट के पहले ही श्यामाकुमारी और उसके पीछे बैठे हुए सत्यव्रत को छोड़ कर सब उत्तर लिख कर स्लेटें उल्टी कर के रख देते हैं। उत्तर लिखते-लिखते कोई-कोई बालक अपने एक हाथ का पंजा फैला-सिकोड़ लेते हैं। लगता है कि जैसे कोई संकेत कर रहे हों। निरीक्षिका जी कनखियों से देखती हैं, लेकिन बोलती कुछ नहीं।]

निरीक्षिका : (श्यामाकुमारी और सत्यव्रत से) **एक मिनट समाप्त हो रहा है, तुम उत्तर क्यों नहीं लिखते?**

[श्यामाकुमारी और सत्यव्रत भी जल्दी से उत्तर लिखते हैं। पहले श्यामाकुमारी उत्तर लिखकर स्लेट उलटी कर के रखती है, पीछे सत्यव्रत।]

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) **मास्टर जी,**

तनिक आप इन सब के उत्तर देख जाइये और ठीक उत्तरों को चिन्हित कर दीजिये।

[मास्टर जुगतराम जल्दी-जल्दी सब छात्र-छात्राओं के उत्तर देख डालते हैं।]

निरीक्षिका : (उत्तर देख, लौट कर आते हुए मास्टर जुगतराम से) कहिये मास्टर जी, देख लिये सब के उत्तर ?

जुगतराम : जी हाँ, देख लिये। सब के सही हैं।

निरीक्षिका : (छैलबिहारी से) तुम्हारा क्या उत्तर है।

छैलबिहारी : पाँच टुकड़े, पाँच बार।

निरीक्षिका : (ग्रेटागार्बो से) और तुम्हारा ?

ग्रेटागार्बो : यही।

निरीक्षिका : (नवाबराय से) तुम अपने हाथ का पंजा फैला-सिकोड़ क्यों रहे थे ?

नवाबराय : (सकपका कर बात बनाते हुए) जी कुछ नहीं, जरा सुस्ती झाड़ रहा था।

निरीक्षिका : (रहस्य-भरी दृष्टि डालते हुए)

ठीक । (सत्यव्रत से जिस ने सबसे पीछे स्लेट रक्खी थी ।) तुम्हारा क्या उत्तर है ?

सत्यव्रत : (घबराकर) जी, जी···य-य···यही ।

निरीक्षिका : यही कि और कुछ ? यहाँ ला कर स्लेट दिखाओ ।

[सत्यव्रत डरता-डरता सा आता है और स्लेट दिखाता है । उत्तर लिखा होता है--चार टुकड़े, पाँच बार ।]

निरीक्षिका : (सत्यव्रत के आगे बैठी श्यामाकुमारी से) तुम भी अपनी स्लेट यहाँ ला कर दिखाओ ।

[श्यामाकुमारी भी स्लेट लेकर आती है । उत्तर लिखा होता है—पाँच टुकड़े, चार बार ।]

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) आप तो कह रहे थे कि सब के उत्तर सही हैं । इन दो बालकों ने तो--

जुगतराम : (जल्दी से, निरीक्षिका जी को बात पूरी न करने दे कर) अजी एक-दो गलत कर बैठे होंगे । मैं ने जल्दी में ही तो जाँचा था (कुछ रुक कर

बात को आई-गई करने के स्वर में) और फिर इतनों में एक-दो की गिनती क्या।

निरीक्षिका : (भेद-भरी मुस्कान मुस्करा कर) मालूम होता है मास्टर जी, आज-कल आपका मस्तिष्क कुछ कम काम कर रहा है। शायद मलाई वाला बढ़िया दूध पीने को नहीं मिल रहा; पतले, पानी मिले हुए दूध से ही काम चलाना पड़ रहा है।

जुगतराम : (बात हँसी में टलती हुई जान, निरीक्षिका जी के यथार्थ आशय को न समझते हुए) क्या किया जाय। आप तो सब जानती ही हैं। यह रोहतक तो है नहीं, दिल्ली है। दिल्ली में जैसे गुजर-बसर हो जाय, ठीक ही है; आखिर जीना तो है ही।

निरीक्षिका : (श्यामाकुमारी से) तुम्हारा यह उत्तर कैसे आया?

श्यामाकुमारी : (यह समझ कर कि मेरा उत्तर गलत है, कुछ घबराती हुई सी) जी मैं ने यूँ सोचा कि गज भर एक बार फाड़ा, एक टुकड़ा हुआ; दुबारा फाड़ा, दो हुए; तिबारा फाड़ने से तीन हो गये। और चौथी बार फाड़ने से एक-साथ दो टुकड़े होने ही हुए। बचे एक गज को और कैसे फाड़ा जा सकता है। इसी लिए मैंने उत्तर लिखा—पाँच टुकड़े, चार बार।

निरीक्षिका : (सत्यव्रत से) तुम्हारा उत्तर 'चार टुकड़े, पाँच बार' कैसे आया ?

[सत्यव्रत से कोई उत्तर बन नहीं पड़ता। वह जी-जी करता, घिघियाता हुआ सा चुप रह जाता है।]

निरीक्षिका : (मुस्करा कर मास्टर जुगतराम से) मास्टर जी, उत्तर सही किस का रहा ?

[मास्टर जुगतराम बात की तह तक पहुँच कर अपनी भूल समझ, हतप्रभ हो, घबरा जाते हैं। फिर सँभल कर, कुछ मुस्करा कर बात बनाते हुए कहते हैं।]

जुगतराम : अरे ! कच्चा तो सब चक्कर खा गई

आपके सरल किन्तु पेचदार प्रश्न से। कक्षा ही क्यों, जल्दी-जल्दी में मैं भी चक्कर खा गया। सवाल सही तो इसी श्यामाकुमारी ने निकाला। आखिर बजाज की बेटी है न।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम के बात बनाने को समझते हुए व्यंग्य पूर्वक उन्हें बनाते हुए) जल्दी-जल्दी में भी हद घपला हो जाता है।

जुगतराम : (निरीक्षिका जी के व्यंग्य को न समझते हुए) यह तो है ही।

निरीक्षिका : (कुछ मुस्करा कर) यदि मैं यह समझ लूँ कि आप की कक्षा में केवल यही होश्यार है, तो और घपला तो नहीं हो जायेगा ?

जुगतराम : (लज्जित होते हुए) अब मैं क्या कहूँ। मेरा तो मुँह ही नहीं खुलता। (कुछ चाटुकारिता के लहजे में) आप ने तो गजब का कमाल कर

दिखाया ! एक चुटकी में मुझ समेत सारी कक्षा की होश्यारी झाड़ कर रख दी ।

निरीक्षिका : (पुनः सत्यव्रत से) हाँ-जी, ठीक-ठीक बताओ—तुम्हारा यह उत्तर कैसे आया ?

सत्यव्रत : (घिघियाता हुआ सा कुछ सोच कर) एक बार फाड़ा, पौन गज; दो बार फाड़ा, सवा गज--

निरीक्षिका : (सत्यव्रत को बात पूरी न करने दे कर उस का कुछ मजाक सा उड़ाते हुए) और तीसरी बार फाड़ा, डेढ़ गज; और चौथी बार फाड़ा तो पौने दो गज । क्यों, ठीक है न ?

[सत्यव्रत चुप खड़ा रहता है ।]

निरीक्षिका : (पुनः सत्यव्रत से) ठीक-ठीक बताओ, तुम ने यह उत्तर कैसे लिखा ?

[सत्यव्रत उसी तरह चुप, पत्थर की मूरत बना, खड़ा रहता है; कुछ बोलता नहीं ।]

निरीक्षिका : (उसे अपने पास बुला कर प्यार से) तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा, ठीक बात बता दो।

सत्यव्रत : (रोता हुआ) मैं ने श्यामाकुमारी की कापी से देख कर लिखा था।

[इतना कह कर सत्यव्रत सुबकियाँ भरने लगता है।]

निरीक्षिका : (उसी तरह प्यार से) तो कहना चाहिये कि तुमने नकल की। क्यों, की न ?

[सत्यव्रत उत्तर में कुछ न कह कर सुबके चला जाता है।]

निरीक्षिका : (सहानुभूतिपूर्ण स्वर में) रोओ नहीं। जो मैं पूछूँ, वह बताओ। तुम ने अपनी पुस्तक में 'गांधी जी और नकल' नामक पाठ पढ़ा है ?

सत्यव्रत : (सुबकना कम कर के) पढ़ा है।

निरीक्षिका : तो तुम जानते हो न कि नकल करना कितना बुरा है ?

सत्यव्रत : जानता हूँ।

निरीक्षिका : गांधी जी कौन थे ?

सत्यव्रत : अपने देश के एक बहुत बड़े आदमी थे; सन्त-महात्मा थे।

निरीक्षिका : उन्हों ने मास्टर जी के अवसर देने, अपितु सुझाव देने एवं आग्रह करने पर भी नकल नहीं की, फिर तुमने क्यों की ?

सत्यव्रत : (पुन: अधिक सुबकता हुआ) मैं भी नहीं करता, मास्टर जी के कहने पर की।

[मास्टर जुगतराम के कान खड़े होते हैं।]

जुगतराम : (तेजी से) मेरे कहने से ! क्या कहता है मक्कार ? मैं ने कब कहा था ?

सत्यव्रत : (सहमा सा दबे हुए स्वर में) कहा न था आप ने···तब उस दिन सारी कक्षा से ?

[निरीक्षिका जी तोलती-परखती, मर्म तक बेधती-छेदती, एक भेद-भरी जाँच की निगाह मास्टर जगतराम पर डालती हैं और फिर उन्हें हाथ के इशारे से बोलने को मना कर स्वयं सत्यव्रत से आगे बात करती हैं।]

निरीक्षिका : (प्यार से) लेकिन गांधी जी ने तो बुरी बात करने के लिए कहने पर

अपने मास्टर का कहना भी नहीं माना था।

सत्यव्रत : (जल्दी से पछतावे के स्वर में) मैं ही कहाँ मान रहा था।

निरीक्षिका : फिर क्या बात हुई ?

सत्यव्रत : गुरु पर विद्यार्थियों को श्रद्धा रखनी चाहिये— सब कहते हैं, पुस्तक में भी लिखा है; इसी लिये मान गया।

निरीक्षिका : (कुछ सोचती हुई) इस लिए मान गये। बात तो ठीक है। कहा क्या था तुम्हारे गुरु जी ने ?

सत्यव्रत : (मास्टर जुगतराम की ओर कनखियों से देखते हुए डर-भय से भरे हुए स्वर में) इन्हों ने कहा था कि बुरी बात भी कभी-कभी अच्छी हो जाती है। ऐसे अवसर पर नकल करना बुरा नहीं है। बस, निरीक्षिका जी को पता नहीं चलना चाहिए।

निरीक्षिका : (खिन्नता से भरते हुए किन्तु

उसे प्रकट न होने देकर) तुमने मास्टर जी के आगे गांधी जी वाली बात नहीं रक्खी ?

सत्यव्रत : रक्खी थी। मैं ने ही नहीं, कई एक ने एक-साथ रक्खी थी। इन्होंने कहा——कभी-कभी बहुत भले आदमी भी बुरा काम कर जाते हैं। माने हुए चोटी के समझदार भी बुद्धू बन जाते हैं। गांधी जी इस मामले में ऐसे ही हो गये। उन्होंने नक़ल न कर के अपने मास्टर का बुरा किया। उस की रिपोर्ट खराब कराई। आप बुद्धू बने, सो अलग। सारी कक्षा सही लिखने वाली रही, वही अकेले गलत लिखने वाले बनें—यह कुछ अच्छा हुआ ?

[सत्यव्रत की बात सुनकर निरीक्षिका जी खिन्नता के साथ-साथ क्रोध से भी भर उठती हैं। अब उनकी सहज संयतता शिथिल पड़ जाती है। वह सत्यव्रत को अपनी जगह पर जाने का संकेत कर मास्टर ज तराम पर बरस पड़ती हैं।]

निरीक्षिका : (क्रोध से तमतमाती हुई मास्टर जुगतराम से) तो-तो आप ने इस घटना से यह निष्कर्ष निकाला कि गांधी जी बुरे थे!···बुद्धू थे!

[मास्टर जुगतराम के चेहरे पर एक रंगत आती है, एक जाती है; उन के मुँह से बोल नहीं निकलता।]

निरीक्षिका : (वैसी ही क्रोधपूर्ण मुद्रा में) कहिये, है न यही बात ? बोलते क्यों नहीं ? (कुछ क्षण के लिए रुक कर फिर व्यंग्यपूर्ण स्वर में) जब यह बात है, तो कक्षा-भवन में गांधी जी का चित्र टांग कर आप अपने होनहार विद्यार्थियों को बुरे बनने की···बुद्धू बनने की प्रेरणा क्यों दे रहे हैं ? (उन्हीं के शब्दों को दुहराते हुए) यह क्या कुछ अच्छा होगा ? (व्यंग्य को और तीखा कर के) इस में क्या बुद्धूपन नहीं है ?

जुगतराम : (काँपते, सकपकाते एवं घिघियाते हुए) जी···जी, मेरा···मेरा यह मतलब न था। मैं···मैं तो—

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर जल्दी से) बस-बस, रहने दीजिये अपने मतलब को अपने ही पास। मुझे आप के मतलब से कोई मतलब नहीं।

[निरीक्षिका जी अपनी नोट-बुक निकाल कर कुछ नोट करती हैं। तदुपरान्त मास्टर जुगतराम से कक्षा का हाजिरी-रजिस्टर ले कर उसे ध्यान-पूर्वक देखती हैं।]

निरीक्षिका : (हाजिरी-रजिस्टर को उलट-पुलट कर देखती हुई मास्टर जुगतराम से) उपस्थिति तो आप की कक्षा की अच्छी रहती है। आज भी तीस में से सत्ताईस छात्र उपस्थित हैं। दो विद्यार्थी तो बीमारी के कारण छुट्टी पर ही हैं। इसलिए देखा जाय तो वास्तविक अनुपस्थिति तो केवल

एक की ही रही।

जुगतराम : (निरीक्षिका जी की बोली में कुछ संतोष एवं प्रसन्नता का आभास पा कर अवसर उचित जान, खीसें निपोरते हुए) जी आप की कृपा से छात्र मुझ से प्रसन्न रहते हैं। टूटा-फूटा जैसा मैं उन्हें पढ़ा पाता हूँ, उसी में उन्हें रस आता है और वे नागा नहीं करते।

[निरीक्षिका जी रजिस्टर में रक्खे हुए बीमारी की छुट्टी के दोनों प्रार्थना-पत्रों को पढ़ती हैं और उन का रजिस्टर में छुट्टी लगाये जाने से मिलान करती हैं।]

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम से) बीमारी की छुट्टी के ये प्रार्थना-पत्र हैं तो जोगासिंह और भोगासिंह के, किन्तु आप ने छुट्टी का चिन्ह लगा दिया है छज्जूराम और जोगासिंह के आगे— यह क्या बात है?

जुगतराम : (घबराकर) देखूँ! (रजिस्टर में देख

कर और भूल पा कर विनय-पूर्वक क्षमा-याचना के स्वर में) जल्दी-जल्दी में ऐसा हो गया है। छुट्टी पर तो ये कई रोज से हैं। और दिन तो रजिस्टर ठीक ही भरा गया है।

निरीक्षिका : तो आपकी कक्षा में उपस्थिति सत्ताईस है ?

जुगतराम : जी।

निरीक्षिका : (कक्षा पर दृष्टि डालकर, मन-ही-मन छात्र-छात्राओं की गिनती कर के) मुझे तो संख्या छब्बीस दीख रही है ? यह हाजिरी आप ने कैसी लगाई ?

जुगतराम : (आश्चर्य से) छब्बीस ! जी नहीं, सत्ताईस होगी। (स्वयं गिनती करते हैं, गिनने पर छब्बीस ही पा कर) संख्या तो छब्बीस ही है। कोई एक विद्यार्थी सम्भवतः पानी-पेशाब के चक्कर में बाहर चला गया होगा।

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम पर जाँच की निगाह डालते हुए) जब से मैं आई हूँ, तब से तो कोई बाहर गया नहीं है।

जुगतराम : आप के आने से पहले ही चला गया होगा।

निरीक्षिका : (आश्चर्य प्रकट करते हुए) तो अब तक लौट कर नहीं आया ?

[मास्टर जुगतराम निरुत्तर हो जाते हैं। फिर भी बिगड़ती हुई बात को सँभालने की चेष्टा करते हैं।]

जुगतराम : (किंचित् मुस्करा कर) निरीक्षण कलेजे में कम धुकधुकी पैदा नहीं करता ! (स्वर में चाटुकारिता का पुट ला कर) और फिर आप का निरीक्षण ! सच, जवाब नहीं है आप का। सारे विभाग में इने-गिने निरीक्षक ही आप के लग्गे-ढग्गे के होंगे। वे भी आप जैसे होंगे, आप नहीं। (बात आई-गई करते हुए)

बच्चे ने सोचा होगा—सहज बचे निरीक्षण की धुकधुकी से। बस, इसी लिए बाहर रह गया होगा। (सफाई दिखाते हुए) आप कहें तो किसी को बाहर भेज कर उसे बुलवाया जाय ?

निरीक्षिका : (असल बात को समझ कर बात को और तूल न देते हुए) न-न, बुलाने की आवश्यकता नहीं है। मैं सब समझ गई हूँ।

[निरीक्षिका जी हाजिरी-रजिस्टर बन्द कर के रख देती हैं और आँखें मूँद कर कुछ इस प्रकार बैठ जाती हैं कि जैसे ध्यानावस्थित हो गई हों। मास्टर जुगतराम उन के चेहरे को गौर से देखते तथा उस पर आते उतार-चढ़ाव को पढ़ने की चेष्टा करते रहते हैं।

कुछ देर पीछे निरीक्षिका जी आँखें खोलती हैं तथा अत्यन्त शांत एवं गम्भीर स्वर में मास्टर जुगतराम को सम्बोधन करते हुए कहती हैं।]

निरीक्षिका : निरीक्षण तो समाप्त हुआ। अब बाकी काम भी लगे-हाथ निपटा

दिया जाए ।

जुगतराम : (चाटुकारितापूर्ण स्वर में) जी-जी, जैसी महोदया की इच्छा । अब बाकी काम ही क्या रहा है । जो हो, आज्ञा प्रदान करें । पलक झपकते—

[निरीक्षिका जी खीझ के साथ, फिर भी शिष्टता-पूर्वक हाथ के इशारे से मास्टर जुगतराम को चुप रहने का संकेत करती हैं और अपना बेग खोल तथा उस में से निरीक्षण-विवरण-पुस्तिका निकाल, अपना फाउण्टेनपेन हाथ में ले, नोट-बुक की सहायता से निरीक्षण-विवरण लिखने बैठ जाती हैं । मास्टर जुगतराम अपनी कुरसी पर बैठे-बैठे गर्दन उचका-उचका कर चोरी-चोरी कनखियों से जो वे लिखती जाती हैं, उसे पढ़ने की चेष्टा करते जाते हैं । जो उन के पढ़ने में आता है, उस से उन का बदन काँपने लगता है, पाँव लड़खड़ाने लगते हैं तथा चेहरे की रंगत पीली पड़ जाती है ।]

जुगतराम : (डुबता हुआ व्यक्ति जिस प्रकार अपने बचाव के लिए अन्तिम बार हाथ-पाँव मारता है, कुछ-कुछ इसी तरह अपने बचाव की चेष्टा करते हुए) जी, जी, आप ने मुझे ठीक

से समझा नहीं। मैं वैसा हूँ नहीं, जैसा—

निरीक्षिका : (बिना गर्दन उठाये मास्टर जुगतराम को बात पूरी न करने दे कर) **आप निश्चिन्त रहें। मैं आप को अच्छी तरह समझ गई हूँ।**

जुगतराम : (निपट निराश-हताश हो कर निरीक्षिका जी के निकट जितना अपना मुँह ले जाया जा सकता है, उतना ले जा कर अत्यन्त धीमे एवं दीन स्वर में दया-याचना सी करते हुए) **निरीक्षिका महोदया !···बहन मेरी !···मैं मर जाऊँगा !!**

निरीक्षिका : (कलम रोक कर तथा एक क्षण के लिए मास्टर जुगतराम की ओर देखते रह कर) **मास्टर जी, मुझे आप से सहानुभूति है, परन्तु**

मैं निरुपाय हूँ। मेरी सहानुभूति के पात्र आप से अधिक ये बच्चे हैं, जिन के जीवन का बनना-बिगड़ना बहुत-कुछ आप पर निर्भर है।

[निरीक्षिका जी पुनः लिखने बैठ जाती हैं। लिखने के अन्त पर आते-आते वह अपने लिखे हुए को आरम्भ से पढ़ने लगती हैं। मास्टर जुगतराम न जाने कौन सा एक शब्द पढ़ पाते हैं, जिस के पढ़ते ही उन्हें काठ मार जाता है। कुछ क्षणों के लिए उन्हें सूझ नहीं पड़ता कि क्या करें? फिर सहसा उन्हें एक जुगत सूझ जाती है। तदनुसार वह जान पर खेल कर निरीक्षिका जी का कलम पकड़ लेते हैं और--करुणा भी रो पड़े, ऐसे दीनतापूर्ण, उदास एवं दुख से भरे स्वर में गिड़गिड़ाते हुए निरीक्षिका जी को सम्बोधन करके कहते हैं।]

जुगतराम : (निरीक्षिका जी से अत्यन्त धीमे स्वर में) **महोदया, महोदया! दया! दया!! ऐसी कलम न चलाएँ। कुछ तो मेरा खयाल—**

निरीक्षिका : (मास्टर जुगतराम की बात में बनावट का आभास पा कर उसे बीच में ही काटते हुए एवं उन के कलम पकड़ लेने से रुष्ट हो कर)

यह क्या कर रहे हैं आप ? छोड़िये कलम (कुछ रुक कर व्यंग्यात्मक, कटु एवं कठोर मुस्कान के साथ) खयाल !...खयाल ही तो कर रही हूँ आप का। सच, आप का काम इतना सुचारु, इतना सुन्दर, इतना अनुकरणीय है कि आप को पारितोषिक मिलना ही चाहिए...पूरा पारितोषिक !

[मास्टर जुगतराम के चेहरे पर मुर्दनी छा जाती है। उन की उँगलियों की पकड़ ढीली पड़ जाती है। निरीक्षिका जी का कलम उन की पकड़ से छूट जाता है। निरीक्षिका जी स्थिर चित्त से रिपोर्ट पूरी करती हैं और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ती हैं।]

निरीक्षिका : (निरीक्षण-विवरण-पुस्तिका बेग में और नोट-बुक तथा फाउंटेनपेन जेब में रख कर कुरसी से उठ खड़ी होती हुई मास्टर जुगतराम से) अच्छा तो अब मुख्याध्यापक के पास चलें।

[छात्र-छात्राएँ खड़े हो कर निरीक्षिका जी को अभिवादन करते हैं। निरीक्षिका जी उन का अभिवादन लेती तथा उन्हें आशीष देती हुई कक्षा-भवन से बाहर चली जाती हैं। मास्टर जुगतराम को इस समय न कुछ दीख रहा होता है, न कुछ सुन रहा होता है। वह डोर में बंधे-बधे से निरीक्षिका जी के पीछे-पीछे कक्षा-भवन से बाहर चले जाते हैं। जैसे ही ये दोनों कक्षा-भवन से बाहर होते हैं, कक्षा में धीमी-धीमी हू-हा होने लगती है। छात्र-छात्राऐं जैसे एक प्रकार की घुटन से मुक्ति की साँस लेते हुए तरह-तरह की हलकी-फुलकी चर्चा कर के निरीक्षण की थकान उतारने में लग जाते हैं।

[कुछ ही देर बाद मास्टर जुगतराम पुनः कक्षा में लौट आते हैं और आकर धम से अपनी कुरसी पर बैठ, पलक मूँद, लम्बे-लम्बे साँस छोड़ने लगते हैं। निरीक्षिका जी द्वारा जिस पारितोषिक के उन्हें दिलाये जाने के लिए तैयारी की जा रही होती है, उस मुसीबतों की खान पारितोषिक से अपने को दूर ही रखने की कोई भी और जुगत मस्तिष्क में न आने के कारण उनकी निढाली और भी बढ़ रही होती है।

मास्टर जी के कक्षा में लौट आने पर बच्चे बोलना बन्द कर चुप हो जाते हैं और उन की हालत देख-देख कर चकित हो-हो, संकेत-संकेत में एक-दूसरे से पूछते हैं कि मास्टर जी को क्या हो गया है। भोलू भाई से नही रहा जाता। वह मास्टर जी से ही उन की हालत के बारे में पूछ बैठता है।]

भोलू भाई : (अत्यन्त भोलेपन से) मास्टर जी, आप ऐसे कैसे हो रहे हैं? थक बहुत गये शायद निरीक्षण कराते-कराते। निरीक्षण समाप्त हो गया? आप पास हो गये ?

जुगतराम : (शुष्क काठ जैसे कठोर एवं निर्जीव स्वर में) हाँ, हो गया पास!···प्रथम श्रेणी में पास!!—तुम्हारे उत्तर ही इतने गजब के थे!

कई छात्र-छात्राएँ : (मास्टर जी के लहजे को न समझ कर, हर्षित हो, उन के पास आते हुए एक-साथ) तो अब दीजिये छुट्टी निरीक्षण समाप्त होने की, खिलाइये मिठाई पास होने की··· बढ़िया मिठाई!

['मिठाई' शब्द सुन कर मास्टर जुगतराम भभक उठते हैं। मारे गुस्से के उन पर पागलपन सा छा जाता है।]

जुगतराम : (कुरसी से उठ, अपना गोल-मटोल हाथ में ले, किचकिचियाँ

बाँध कर विद्यार्थियों पर दौड़ते हुए) मिठाई खाओगे, मिठाई ! लो, खाओ मिठाई !—बढ़िया मार-मिठाई !!

[बालक मास्टर जुगतराम के विचित्र व्यवहार से घबराते, भयभीत होते तथा गोल-मटोल का आघात न सहना पड़ जाय, इस लिए हाथों से अपना बचाव करते हुए भाग कर जल्दी से अपनी-अपनी जगहों पर जा बैठते हैं। निर्जीव से हुए मास्टर जुगतराम भी अधिक उन का पीछा न कर, लौट कर अपनी कुरसी पर आ बैठते हैं।

कुछ देर तक कक्षा में सन्नाटा छाया रहता है। बालक मास्टर जुगतराम के व्यवहार को ठीक-ठीक न समझ पा कर चक्कर खा रहे होते हैं। इधर मास्टर जुगतराम सोच में डूबे, मुँह लटकाये, एक दम निढाल हुए बैठे होते हैं।

कुछ समय इसी प्रकार बीतने पर नानकचन्द, नटखटराय, चुहिया, रमा आदि चंचल बालक-बालिकाओं से नहीं रहा जाता। वे एक-साथ खड़े हो कर मास्टर जुगतराम को सम्बोधन कर के कहते हैं।]

नानकचन्द आदि : (उकतावट टपकाते हुए से स्वर में) मिठाई न खिलाइये मास्टर जी, छुट्टी तो दीजिये।

अन्य सब बालक : (नानकचन्द आदि के स्वर में स्वर मिला कर) हाँ-हाँ मास्टर जी, छुट्टी तो दीजिये।

[मास्टर जुगतराम निराशा एवं उदासी से भरी, फटी-फटी आँखों से कक्षा के सब बालक-बालिकाओं को—न जाने कहाँ खोये-खोये से, कछ क्षणों तक देखते रहते हैं। फिर कुछ चैतन्य हो कर अत्यन्त मरी सी आवाज में बोलते हैं।]

जुगतराम : छुट्टी तुम्हें क्या दूँ। लगता है, मुझे ही छुट्टी मिलने वाली है।

[कहते-कहते मास्टर जुगतराम का चेहरा और भी लटक जाता है। उन के मुँह की रंगत और भी उड़ जाती है। वे अत्यधिक हताश-निराश—कहना चाहिए, जीवित ही मृतक-समान दीखते हैं। छात्र-छात्राएँ उन की ओर अकचकाये-अकचकाये से देखते हैं। वे जैसे जानना चाहते हों कि बात क्या है।]

[पर्दा गिरता है।]



श्री हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि' कृत
अन्य बालोपयोगी रचनाएँ

१. **पढ़ो और बनो** : तीन मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद कहानियों का संग्रह । दूसरा संस्करण । मूल्य पिचहत्तर पैसे ।

२. **बदला** : बालकों के स्कूली जीवन से सम्बन्धित एक लघु उपन्यास । बदला कैसे लें ?—बताने वाला । मूल्य अस्सी पैसे ।

३. **बन लो हीरे** : तीन अत्यन्त रोचक एवं मर्म-स्पर्शी कहानियों का संग्रह । पुस्तक सचित्र, सजिल्द । मुख-पृष्ठ तिरंगा । दूसरा संस्करण । मूल्य एक रुपया ।

४. **जीवन में खेलो** : चार सरस, मनोरंजक तथा जीवन में भी खेलने योग्य (रंग-मंच पर ही नहीं) एकांकियों का संग्रह । पुस्तक सचित्र, सजिल्द । मुख-पृष्ठ तिरंगा । दूसरा संस्करण । मूल्य दो रुपये ।

५. **बनो लाल अनमोल** : पाँच सरस, रोचक एवं प्रेरक कहानियों का संग्रह । पुस्तक सचित्र, सजिल्द । मुख-पृष्ठ तिरंगा । दूसरा संस्करण । मूल्य दो रुपये ।

६. **चलते पुर्जे** : दो शिष्ट हास्य-रचनाओं का संग्रह । एक लघु उपन्यास, एक लघु कथा । पढ़ कर केवल हंसेंगे ही नहीं, कुछ सीखेंगे भी । पुस्तक सचित्र, सजिल्द । मुख-पृष्ठ तिरंगा । मूल्य दो रुपये ।

७. **अपने-अपने मुँह से** : इस-उस की नौ अनूठी आत्म-कथाओं का संग्रह । सरसता, शिक्षा एवं प्रेरकता से भरपूर । पुस्तक सचित्र, सजिल्द । मुख-पृष्ठ तिरंगा । मूल्य दो रुपये ।

प्राप्ति-स्थान

सुन्दर साहित्य सदन

८८२, गली बेरी वाली, कूचा पातीराम

दिल्ली-६

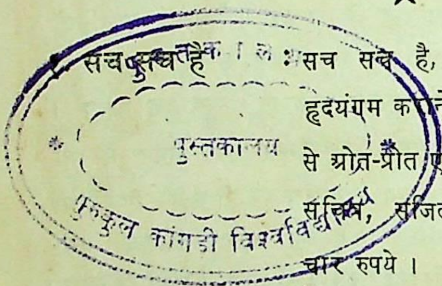
बाल-साहित्य के

सफल लेखक

श्री हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि' कृत

बालोपयोगी दो नई रचनाएँ





१. सच सच है : सच सच है, झूठ झूठ—इस तथ्य को हृदयंगम कराने वाला, मनोरंजन एवं कौतूहल से ओत-प्रोत एक प्रेरणाप्रद उपन्यास। पुस्तक सचित्र, सजिल्द। मुख-पृष्ठ तिरंगा। मूल्य चार रुपये।

२. बन लो फूल गुलाब : गुलाब के फूल जैसा बनने की प्रेरणा देने वाली सरस एवं मनोरंजक कहानियों का संग्रह। पुस्तक सचित्र, सजिल्द, मुख-पृष्ठ तिरंगा : मूल्य दो रुपये।



शीघ्र ही प्रकाशित होंगी

प्रतीक्षा करें

सुन्दर साहित्य सदन

ली बेरी वाली, बाजार सीताराम

दिल्ली-६






R74.1,GUP-N
04276

